अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र

सर्वोदय जगत

वर्ष-39, अंक-22, 01-15 जुलाई, 2016

राजनीतिक सत्ता के निहितार्थ

मेरी दृष्टि में राजनीतिक सत्ता कोई साध्य नहीं है, परन्तु जीवन के प्रत्येक विभाग में लोगों के लिए अपनी हालत सुधार सकने का एक साधन है। राजनीतिक सत्ता का अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवन का नियमन करने की शक्ति। अगर राष्ट्रीय जीवन इतना पूर्ण हो जाता है कि वह स्वयं आत्म-नियमन कर ले, तो किसी प्रतिनिधित्व की आवश्यकता नहीं रह जाती। उस समय ज्ञानपूर्ण अराजकता की स्थिति हो जाती है। ऐसी स्थिति में हरएक अपना राजा होता है। वह इस ढंग से अपने पर शासन करता है कि अपने पड़ोसियों के लिए कभी बाधा नहीं बनता। इसलिए आदर्श अवस्था में कोई राजनीतिक सत्ता नहीं होती, क्योंकि कोई राज्य नहीं होता। परन्तु जीवन में आदर्श की पूरी सिद्धि कभी नहीं होती। इसीलिए थोरो ने कहा है कि सबसे कम शासन करे वही उत्तम सरकार है।

(''यंग इंडिया'', 2-7-1931)

–गांधी

सर्व सेवा संघ
(अखिल भारत सर्वोदय मंडल)
द्वारा प्रकाशित

अहिंसक क्रान्ति का पाक्षिक मुख-पत्र
सर्वोदय जगत
सत्य, अहिंसा एवं सर्वोदय-सम्पूर्ण क्रांति का संदेश वाहक

वर्ष : 39, अंक : 22, 01-15 जुलाई, 2016

संपादक
बिमल कुमार
मो. : 9235772595

कार्यकारी संपादक
डॉ.योगेन्द्र यादव

संपादक मंडल
डॉ. रामजी सिंह भवानी शंकर 'कुसुम'

संपादकीय कार्यालय
सर्व सेवा संघ, साधना केन्द्र
राजघाट, वाराणसी-221001 (उ.प्र.)
फोन : 0542-2440-385/223
ईमेल : sarvodayajagat@gmail.com
Website : sssprakashan.com

शुल्क

मूल्य	:	पांच रुपये
वार्षिक	:	100 रुपये
आजीवन	:	1000 रुपये

खाता संख्या : 383502010004310
IFSC No. UBIN-0538353
Union Bank of India

विज्ञापन दर
पूरा पृष्ठ : 2000 रुपये
आधा पृष्ठ : 1000 रुपये
चौथाई पृष्ठ : 500 रुपये

इस अंक में...

1. अध्यक्ष का संदेश 02
2. महात्मा गांधी की 150वीं जयंती... 03
3. राष्ट्रों के बीच शान्ति... 04
4. 'हिन्द स्वराज का अमिट सत्य... 05
5. कस्तूरबा गांधी का 150वाँ जन्मदिन... 07
6. रक्षा एवं खुदरा क्षेत्र में शत-प्रतिशत... 08
7. नामसमझी का नया दौर... 09
8. बीज बचेगा तो हम बचेंगे... 10
9. नशाबंदी : पीड़ा भी अपनी दोष भी... 11
10. विदेशी कवि की अंग्रेजी कविता... 13
11. आखिर कब तक चलेगा?... 14
12. गरीबी का बढ़ता दायरा... 15
13. गांधीजी का अर्थनीति... 16
14. हल्दी के औषधीय गुण... 17
15. हर मौसम से प्यार करें... 20

सर्व सेवा संघ-अध्यक्ष का संदेश

निर्भीकता एवं सादगी के प्रतीक थे तेजसिंह भाई

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि 30 मई 2016 को स्वतंत्रता सेनानी एवं सर्वोदय आन्दोलन के अग्रणी आदरणीय स्व. तेजसिंह भाई की शताब्दी मनाई जा रही है।

स्व. तेजसिंह भाई निर्भीकता एवं सादगी के प्रतीक थे। उनका पूरा जीवन गांधी-विचारों से ओतप्रोत था। इसलिए उन पर हुए हमलों के बाद भी वे कभी उत्तेजित नहीं हुए। गांधी का ग्रामस्वराज उनके अन्तरतम में गहरे पैठा हुआ था। वे मानते थे कि गाँवों के उद्धार के बिना देश का उद्धार नहीं हो सकता। ग्रामीण अर्थव्यवस्था कैसे सुदृढ़ हो, इस बारे में उनका चिन्तन लगातार चलता रहता था।

वर्ष 1977 से 1979 तक वे उत्तर प्रदेश सर्वोदय मंडल के अध्यक्ष रहे। उस समय प्रदेश सर्वोदय मंडल का कार्यालय लखनऊ में था। वे स्टेशन से कार्यालय तक पैदल आते थे। वे साइकिल रिक्शा पर कभी नहीं बैठते थे। मानव मानव पर सवारी करे यह उन्हें बिल्कुल गवाँरा नहीं था। उनका मन किसी का भी शोषण स्वीकार नहीं करता था।

1980 के दशक में उन्होंने सर्व सेवा संघ प्रकाशन का नेतृत्व किया। उस समय की एक घटना याद आती है। इलाहाबाद रेलवे स्टेशन पर हमारा सर्वोदय बुक स्टाल है। रेल अधिकारियों ने आदेश दिया कि स्टाल को खूबसूरत बनाने के लिए उस पर सनमाइका लगाया जाय। स्व. तेजसिंह भाई ने कहा, सर्वोदय आन्दोलन विकेन्द्रित एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था को माननेवाला संगठन है अतः हम बड़े उद्योगों में बने सनमाइका का इस्तेमाल नहीं करेंगे। अन्ततः रेलवे वालों को उनकी बात स्वीकार करनी पड़ी।

1983 में जैसलमेर के सर्व सेवा संघ अधिवेशन में नीता के साथ मेरा विवाह हुआ। उन दिनों मैं सम्पूर्ण क्रांति युवा संगम का राष्ट्रीय संयोजक था और उसका कार्यालय वाराणसी में था। अतः हमारा आवास भी वहीं था। जब नीता पहली बार वाराणसी आयी तो तेजसिंह भाई ने परिसर में रहने वाले सभी लोगों को बुलाकर हमारा अभिनंदन किया। वे वहाँ अकेले रहते थे पर कार्यकर्ताओं के सुख-दुःख का खयाल रखते थे।

आज जब तेजसिंह भाई नहीं हैं तब जरूरत इस बात की है कि उनके विचारों की ज्योति को जलाये रखी जाय।

आज खेती एवं गाँव संकट में हैं। शहरीकरण जिस तरह से बढ़ रहा है उससे लगता है कि वह पूरे भारत को ही निगल जायेगा। यह हमारा दुर्भाग्य है कि आज जब पूरी दुनिया शहरों के बढ़ने से चिन्तित है हमारे प्रधानमंत्री इसे अवसर मान रहे हैं। वे कहते भी हैं—हमारी सरकार इन्डस्ट्री फ्रेंडली सरकार है। सरकार की यह सोच भारत को गर्त में ले जानेवाली सोच है। हमें हर कीमत पर इसका मुकाबला करना ही होगा।

शताब्दी समारोह के इस अवसर पर सहभागी होने का अवसर मिलता तो मैं इसे अपना सद्‌भाग्य मानता पर रेल आरक्षण नहीं मिल पाने के कारण आना सम्भव नहीं हो पा रहा है।

मैं सर्व सेवा संघ के सभी पदाधिकारियों तथा देशभर में फैले लोकसेवकों की ओर से स्व. तेजसिंह भाई को नमन करता हूँ।

अहमदाबाद : 28 मई 2016

–महादेव विद्रोही

महात्मा गांधी की 150वीं जयंती

❑ टी.आर.एन. प्रभु

महात्मा गांधी की 150वीं जयंती 2019 में मनायी जायेगी। विश्व में 'गांधी' के विचारों के ऊपर गंभीरता से अनुसंधान भी हो रहा है। अनेक राष्ट्र इस विषय में सचेत हैं और कार्यक्रमों के आयोजन की तैयारियाँ भी कर रहे हैं।

आज महात्मा गांधी की प्रासंगिकता (relevance) क्या है? यह मुख्य विषय है जिसके आधार पर हमें 'गांधी' के लिए क्या-क्या कार्यक्रम आयोजित कर सकते हैं—यह सोचना है। 1969 में जब उनकी जयंती मनायी, उस समय मेरा जीवन ही मेरा संदेश है, इस पर फोकस किया गया था। अपने विचार दुनिया के सामने रखने की कोशिश गांधीजी ने अपने जीवन से ही की थी। किन्तु आज हमारे लिए इससे भी मुख्य दायित्व है कि उनकी विचार-दृष्टि को आगे बढ़ाने का कार्य कैसे संभव है? यह सर्वविदित है कि उन्होंने एक नयी समाज-रचना का लक्ष्य हमारे सामने प्रस्तुत किया था। सर्वोदय का संकल्प इसी प्रकार हमारा लक्ष्य बना। इस विचार के आधार पर एक नया समाज बने, नये मानव का निर्माण हो, इसमें सभी अच्छे गुणों का विकास हो, व्यवस्था में से संकट टले, विषमताएँ दूर हों, यह सब सोचा गया है। यह हमारी कुंजी है और दुनिया के लिए दिशा फलक भी हो सकता है। यह केवल एक विचार नहीं है एक सफल ढाँचे के रूप में प्रस्तुत किया गया है। इस दिशा में हम सोचें और सार्थकतापूर्वक कार्यक्रमों का आयोजन करें, इसके आधार पर सक्रियता से आगे का काम बढ़ाएँ, यह आज की स्थिति में करणीय लगता है।

फोकस किस पर करें और कैसे? 'सर्वोदय-ग्रामस्वराज-आगे का कदम'—इसको इस प्रकार प्रचारित किया जा सकता है। हमारे मूल्यों के ऊपर विचार-विमर्श हो। आज के परिप्रेक्ष्य में समय के बदलाव के साथ, इसको किस नये रूप में आगे प्रस्तुत किया जा सकता है, इस पर भी विचार हो।

निजी सम्पत्ति के अधिकार को गांधीजी ने कभी स्वीकार नहीं किया था। वैसे दुनिया के प्रमुख चिन्तकों ने भी इस पर अपना-अपना विचार व्यक्त किया है। समाजवाद, साम्यवाद ने भी निजी सम्पत्ति को मान्यता नहीं दी है। लगता है समाज के सामने आज जो विडम्बनाएँ हैं, उसका मुख्य कारण निजी सम्पत्ति के ऊपर अधिकार ही है। चिन्तकों ने सोचा है, किन्तु गांधीजी ने रास्ता ढूँढ़ा है। 'ट्रस्टीशिप' सिद्धान्त उनके लिए सही रास्ता है। यही एक रास्ता है जिसके जरिये सम्पत्ति पर जो अधिकार है, उसका फलस्वरूप निवारण हो सका है। इसको अमल में लाने का समय उनको शायद मिला नहीं। अब दुनिया के सामने इसे एक जबरदस्त विकल्प के रूप में सोचा जा सकता है। इस पर चर्चाएँ हों और एक नयी सोच का आधार बने।

Capitalism, Socialism, Communism—सब आज निष्फल हो गये हैं। यहाँ गांधीजी से सम्बन्धित कार्य करें। शायद कुछ रास्ता बन सकता है। व्यवसायियों, बुद्धिजीवियों और युवकों के बीच खास कर इस विषय में खूब चिन्तन-मंथन होना चाहिए। सम्पत्ति का जो Concept है, इसको व्यावहारिक रूप में समझना चाहिए।

महात्मा गांधी को बनाने का काम राष्ट्रीय, प्रादेशिक, स्थानीय स्तर पर हो और इसके अनुसार समितियाँ भी बनें। सरकार की ओर से भी कुछ प्रयास जरूर होगा। किन्तु हमारी—गांधीजनों की जिम्मेदारी है कि अपनी शक्ति के आधार पर अपना कार्यक्रम आयोजित करें।

जिन स्थानों पर गांधीजी का ज्यादा समय बीता है, ऐतिहासिक रूप में उन्होंने कहीं भी कुछ काम किया है। ऐसे स्थानों को जोड़कर भी कार्यक्रमों का आयोजन हो सकता है। ❑

दगाबाजी न कीजिए

उस घी के नाम से, जो वनस्पति, तेल, घी या मक्खन की शकल में या उसके नाम से बेचा जाता है, हिन्दुस्तान के साथ किया जानेवाला एक बड़ा धोखा है, दगा है। हिन्दुस्तान के व्यापारियों का धर्म है कि ये किसी भी शकल में घी के नाम से ऐसा दिखावा करके कोई तेल या पदार्थ न बेचें। किसी सरकार को तो ऐसा हरगिज नहीं करना चाहिए न किसी को ऐसा करने देना चाहिए।

(हरिजन सेवक, 13-10-1946) **–गांधी**

राष्ट्रों के बीच शान्ति

❑ गांधी

मैं मनुष्य की और इसलिए सब प्राणियों की एकता में विश्वास करता हूँ।

मानव जाति एक है, क्योंकि सारे मानव समान रूप से नैतिक कानून के अधीन हैं। ईश्वर की दृष्टि में सारे मानव समान हैं। बेशक, उनमें जाति के, दरजे के और ऐसे ही दूसरे भेद हैं; परन्तु मनुष्य का दरजा जितना अधिक ऊँचा है उतनी ही बड़ी उनकी जिम्मेदारी है।

मेरे जीवन का ध्येय केवल भारतीयों का ही भ्रातृभाव सिद्ध करना नहीं है। भारत की स्वतंत्रता भी मेरे जीवन का ध्येय नहीं है, लेकिन भारत की स्वतंत्रता सिद्ध करके उनके द्वारा मैं मानव-मात्र के भ्रातृभाव का ध्येय सिद्ध करने और उसका प्रचार करने की आशा रखता हूँ। मुझे उस देशभक्ति का त्याग करना चाहिए, जो दूसरे राष्ट्रों को आफत में डालकर, उन्हें लूटकर बड़प्पन पाना चाहती है। देशभक्ति-सम्बन्धी मेरे विचार निरर्थक हैं, अगर वे हमेशा, हर मामले में बिना किसी अपवाद के सम्पूर्ण मानव-समाज के विशाल हित से मेल न खाते हों। यही नहीं बल्कि मेरा धर्म और उस धर्म से उत्पन्न मेरी देशभक्ति सारी सजीव सृष्टि को व्याप्त करनेवाली है। हम एक ही प्रभु की संतान होने का दावा करते हैं और इस कारण अनेक रूपों में दिखायी देनेवाले सारे जीव मूलतः एक ही होने चाहिए।

राष्ट्रीयता बुरी बात नहीं है; बुरी बात तो है संकुचितता, स्वार्थपरायणता और औरों से बिलकुल अलग रहने की वृत्ति, जो कि आधुनिक राष्ट्रों का जहर है, पाप है।

अपने देश की सेवा दुनिया की सेवा में असंगत नहीं है। स्वावलम्बन और आत्म-निर्भरता की तरह परस्परावलम्बन भी मनुष्य का आदर्श है और होना चाहिए।

हम स्वयं मर कर कुटुम्ब को जिलावें, कुटुम्ब मरकर देश को जिलावें और देश मर कर जगत को जिलावे।

सुनहला मार्ग यही है कि सारे जगत को अपना मित्र बनायें और सम्पूर्ण मानव परिवार को एक ही मानें। जो मनुष्य अपने धर्म के अनुयायियों में और दूसरे वर्ग के अनुयायियों में भेद करता है, वह अपने धर्म के अनुयायियों को गलत शिक्षा देता है और घृणा तथा अधर्म का मार्ग खोलता है।

स्वदेशी धर्म मुझे सिखाता है कि हिन्दुस्तान में पैदा होने और उसकी संस्कृति की विरासत पाने के कारण मैं उसकी सेवा करने के लिए सबसे योग्य हूँ और मेरी सेवा पर उसका सबसे पहला अधिकार है। लेकिन मेरा देशप्रेम दूसरों का बहिष्कार करनेवाला नहीं है; उसके पीछे विचार यह है कि वह न केवल किसी दूसरे को नुकसान नहीं पहुँचायेगा, बल्कि सच्चे अर्थ में सारे राष्ट्रों को लाभ पहुँचायेगा। हिन्दुस्तान की मेरी कल्पना की आजादी दुनिया के लिए, कभी संकट का कारण नहीं बन सकती।

अगर भारत की स्वतंत्रता का अर्थ इंग्लैण्ड का नाश या अंग्रेजों का लोप हो, तो भारत की ऐसी स्वतंत्रता मुझे नहीं चाहिए। जिस प्रकार देशप्रेम का धर्म आज हमें सिखाता है कि व्यक्ति को परिवार के लिए मरना चाहिए, परिवार को गाँव के लिए मरना चाहिए, गाँव को जिले के लिए मरना चाहिए, उसी प्रकार देश का इसलिए स्वतंत्र होना चाहिए कि जरूरत पड़ने पर वह संसार के हित के लिए मर सके।

राज्य द्वारा खड़ी की गयी सीमाओं को पार करके अपने पड़ोसियों तक अपनी सेवाओं को फैलाने की कोई सीमा ही नहीं है। ईश्वर ने ऐसी सीमाएँ कभी नहीं बनायीं।

मेरा लक्ष्य सारे जगत से मित्रता साधना है; और मैं महान से महान प्रेम को अन्याय के प्रबल से प्रबल विरोध के साथ मिला सकता हूँ।

मेरी दृष्टि में देशप्रेम का वही स्थान है जो मानव-प्रेम का है।

सेंट पॉल के गिरजाघर को नुकसान पहुँचाने से मुझे उतना ही आघात लगता है, जितना काशी विश्वनाथ के मंदिर को या जुम्मा मस्जिद को बचाऊँगा तथा सेंट पॉल के गिरजाघर को भी बचाऊँगा, लेकिन उनको बचाने के लिए मैं एक भी जान नहीं लूँगा। यह मेरा ब्रिटिश प्रजा से बुनियादी भेद है।

हम सब एक ही मिट्टी के बने हैं, हम सब विशाल मानव-परिवार के सदस्य हैं।

दुनिया के बड़े राष्ट्र जब तक अपनी साम्राज्यवादी आकांक्षाओं को नहीं छोड़ते, तब तक स्थायी शांति बिलकुल असम्भव है। साथ ही जब तक बड़े राष्ट्र आत्म-घातक प्रतिस्पर्द्धा में अपनी जरूरतों को बढ़ाने में और इसलिए भौतिक सम्पत्ति को बढ़ाने में विश्वास रखना नहीं छोड़ेंगे, तब तक स्थायी शांति की प्राप्ति असम्भव दिखायी देती है।

अगर हथियारों के लिए आज की पागलपनभरी दौड़—स्पर्धा—जारी रही, तो निश्चित रूप से उसका परिणाम ऐसे मानव-संहार में आयेगा जैसा संसार के इतिहास में पहले कभी नहीं हुआ। अगर कोई विजेता बच रहा तो जिस राष्ट्र की विजय होगी, उसके लिए वह विजय ही जीवित मृत्यु जैसी बन जायेगी। सर्वनाश का जो खतरा आज दुनिया के सिर पर झूल रहा है, उससे बचने का इसके सिवा दूसरा कोई मार्ग ही नहीं है कि अहिंसा की पद्धति को उसमें समाये हुए सारे भव्य फलितार्थों के साथ, साहसपूर्वक और बिना किसी शर्त के स्वीकार कर लिया जाय।

प्रस्तुति : बद्रीनाथ सहाय

(गांधीजी के वचनों के यूनेस्को द्वारा प्रकाशित संग्रह 'ऑल मैन आर ब्रदर्स' के छठे प्रकरण से)

'हिन्द स्वराज' का अमिट सत्य

❑ डॉ. योगेन्द्र यादव

वर्ष 2005 की बात है। सर्वोदय आंदोलन के स्तम्भ और राजस्थान की पहली सरकार के उद्योग मंत्री रहे सिद्धराज ढड्ढा के नेतृत्व में आयोजित एक बड़े अभियान के सिलसिले में हम अहमदाबाद पहुँचे थे। यह महात्मा गांधी की दांडी यात्रा की पुनरावृत्ति थी, पुनस्मृति थी या कहें तो पुनर्प्रतिष्ठा थी। यह यात्रा उन्हीं पड़ावों और रास्तों से होकर गुजरनी थी, जिनसे होकर गांधीजी 1930 में चले थे और जिनके केवल चलने भर से अंग्रेजों की हुकूमत हिल गयी थी। चलने के अपने ही अर्थ होते हैं। केवल चलने भर से और कुछ चाहे न भी होता हो, पर हमारी जगह जरूर बदल जाती है। सड़क पार करते हुए आदमी को देखकर एक उम्मीद जगती है कि दुनिया जो इस तरफ है, शायद उससे कुछ बेहतर हो उस तरफ। सर्वोदय के लगभग सभी बड़े नेता उस दिन साबरमती आश्रम में एकत्र थे। महात्मा गांधी के निजी सचिव महादेव देसाई के पुत्र नारायण भाई देसाई भी इस यात्रा के शुभारम्भ के मौके पर उपस्थित थे। सिद्धराजजी ने 96 साल की उम्र में इस यात्रा का संकल्प किया, तो यह उनका गांधी-विचार-दीक्षित जीवट ही था, लेकिन मैंने देखा जब वे बोलने खड़े हुए तो फफक पड़े। आसुँओं से भरा हुआ उनका वह उद्‌बोधन उल्लेख करने योग्य है। वे बड़े दर्द से बोले—क्या गांधी का देश गांधी को सचमुच भुला देगा? और क्या गांधी का गुजरात भी? सामने बैठे हम सबसे यही सवाल पूछते हुए सिद्धराजजी रो पड़े थे। मैं उस पूरी यात्रा में उनके साथ रहा, वह यात्रा उतने ही दिन चली, उन्हीं पड़ावों से चली, उन्हीं तरीकों से चली और वहीं पहुँची जहाँ गांधी पहुँचे थे। लेकिन देश फिर भी वहाँ नहीं पहुँचा, जहाँ गांधी ने उसे उस समय पहुँचा दिया था। ऐसा हो भी नहीं सकता था। पराधीनता के उस दौर में गांधी के इस एक सधे हुए कदम ने नमक जैसी मामूली चीज को जिस तरह ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ संघर्ष का मारक प्रतीक बनाकर प्रस्तुत किया था, वह तब सरकार और जनता दोनों के लिए बिलकुल अनपेक्षित बात थी। मोतीलाल नेहरू ने इसके विरोध में गांधीजी को पत्र लिखा—'बापू, क्या तमाशा करते हैं? नमक बचनाकर क्या होगा? गांधीजी उस समय यात्रा में ही थे। लौटती डाक से उनका जवाब आया—'बनाकर देखो'। पत्र मिला तो मोतीलाल नेहरू ने तैयारी शुरू कर दी। इलाहाबाद के जानसनगंज चौराहे पर मोतीलाल नेहरू नमक बनायेंगे, यह खबर प्रशासन को दे दी गयी। जमुनालाल बजाज प्रतीकात्मक नमक बनाने के लिए घड़े में यमुना का पानी लिये चौराहे पर खड़े हुए थे। भीड़ बढ़ गयी। मोतीलालजी चले और चौराहे से पहले ही गिरफ्तार करके नैनी जेल पहुँचा दिये गये। उन्होंने जेल पहुँचते ही गांधीजी को पत्र लिखा—'बापू, मैंने बनाने से पहले ही देख लिया।'

गांधी की टक्कर जब, जहाँ और जिससे भी हुई, सबसे पहले वे अपने आप से टकराते थे। यह उनकी विलक्षण खूबी थी। इसके बाद और प्रतिद्वंद्वी पर टूट पड़ने से पहले बाकायदा वे प्रतिपक्षी को इसकी सूचना देते थे। यह उनके निज का कौशल था। यही वह दोधारी तलवार थी, जिससे शत्रु सेना उनसे खौफ खाती थी और सामने टिक ही नहीं पाती थी। युद्ध छेड़ने से पहले आत्मानुशीलन की यह विनम्रता गांधी के आक्रमण की धार को पैना कर देती थी। उनकी लड़ाई का यह वह मोर्चा था, जब शत्रु पैदल और गांधी रथी हो जाते थे यानी नवैयत बदल जाती थी। 'अगर शांति चाहिए तो पहले अशांति मचानी पड़ेगी'—इतना तक तो सब समझ लेते थे लेकिन 'वह शांति भी अपनी होनी चाहिए... यहीं पहुँचकर बातें दुरूह लगने लगती थीं। हमारे मन का जब खूब मंथन हो जायेगा और हम दुखों की आग में तपने लगेंगे तभी सच्ची शांति का अनुभव कर सकेंगे।' इसके बाद तो बात एकदम समझ के बाहर हो जाती। कैसा है यह आदमी! शत्रु सामने खड़ा है और देश उससे लड़ मरने को आमादा है, ऐसे वक्त में अपना मन मथने की बात...? ओह, नासमझ गांधी... जो समझ में न आ सके वह नासमझ ही तो हुआ। आप जो भी समझ रहे हों, समझें, पर यह भी जरूर समझें कि उस आदमी के हाथ में दोधारी तलवार है। अत्मशोधन...हृदय परिवर्तन... और अथक समर्पण। शत्रु की पराजय जिसका उद्देश्य ही नहीं था, वही सत्याग्रह का अन्वेषक हो सकता है। प्राणिमात्र की अच्छाई में जिसका अखण्ड विश्वास था, उसके लिए मानवता एक सागर की तरह थी, जिसकी कुछ बूंदें खराब भी हों, तो पूरा सागर गंदा नहीं होता।

महात्मा गांधी के मन में इस दुनिया के बरक्स एक बेहतर दुनिया की कल्पना थी। आजादी की लड़ाई में उनके योगदान को भी स्वीकार न करने की एक जिद्द है, जो उनकी प्रासंगिकता पर ही सवाल खड़े करती है। उपभोक्त विश्व उपभोग की सारी सीमाएँ जान लेने के बाद गांधी के विचारपुँज में रास्ता तलाश रहा है। यह सत्य केवल आज का नहीं, इसके पहले का भी है। गांधी को तब भी, जब वे जीवित थे, देश की सीमाओं से बाहर अधिक महसूस किया गया। क्या कहें—गांधी की वैचारिक शक्ति को समझने और उसे स्वीकार करने की हमारी योग्यता ही

नहीं है? या और कोई दुरभिसंधि है? कुछ तो यह योजनाबद्ध भी लगता है। गांधी ने 1909 में हिन्द स्वराज नाम की एक छोटी-सी किताब लिखी। बड़ी बेचैनी से लिखी इस किताब पर आज देशों की सीमाएँ तोड़कर भाष्य लिखे जा रहे हैं। गांधी-विचार का बीजग्रंथ बनने की इसकी पूरी यात्रा की अपनी ही कशमकश है। किताब के आते ही उसे एक मूर्ख आदमी की रचना कह कर भारत में खारिज कर दिया गया। जवाहरलाल नेहरू ने उसे पढ़ने लायक भी नहीं माना। गोखले ने तो यह भी कह दिया कि अभी गांधी अपने देश को नहीं जानते। कुछ वक्त भारत में बिता लेने के बाद वे स्वयं इस किताब को नष्ट कर देंगे। लेकिन यह आदमी तीस वर्ष बाद भी उस किताब का एक भी शब्द बदलने को तैयार नहीं हुआ। उसकी जिद् देखिये कि 'इस किताब में लिखे विचारों में परिवर्तन करने का कोई कारण मुझे नहीं मिला। इसमें जो कुछ भी लिखा, उसकी सत्यता की पुष्टि मेरे अनुभवों से हुई। इसमें विश्वास रखने वाला अगर मैं अकेला भी रह जाऊँ तो मुझे अफसोस नहीं होगा।' लेकिन गांधी को ये नसीहतें तब दी जा रही थीं, जब गांधी शोषण के चरित्र को सत्याग्रह की चुनौती देकर दक्षिण अफ्रीका का इतिहास लिख चुके थे। गांधी ने कहा था कि 'यह किताब किसी बच्चे के हाथ में भी दी जा सकती है क्योंकि यह द्वेष-धर्म की जगह प्रेम-धर्म सिखाती है, हिंसा की जगह आत्म बलिदान को रखती है और पशुबल से टक्कर लेने के लिए आत्मबल को खड़ा करती है।' यह 'आत्म' शब्द गांधी की वैचारिक जीवन की कसौटी है। संघर्ष के साथ-साथ शिक्षण और रचना उनके औजार थे और आजादी मात्र एक पड़ाव। जाना तो उन्हें कहीं दूर था, जहाँ देश के गाँवों में देश की शक्ति को विकेन्द्रित कर देना था। भले यह रास्ता भारत ने छोड़ दिया, पर इसके सूत्र विश्व बिरादरी में ढूँढ़े जा रहे हैं। उनके जीवन कार्यों का सूक्ष्म अवलोकन करने के अलावा मानवता के लिए उनका कोई शाब्दिक संदेश नहीं मिलता।

आज मानवता यह महसूस कर रही है कि मानव समाज को जैसा होना चाहिए, वैसा वह नहीं है। उसमें आमूलचूल परिवर्तन होना चाहिए। मनुष्य के लिए बेहतर समाज कैसा हो, उसकी एक रूपरेखा गांधी ने हिन्द स्वराज में खींची है। इस किताब में आधुनिक सभ्यता की आलोचना है। इसी बिन्दु पर आधुनिक समाज इस किताब, इसमें व्यक्त विचार और जिद्दी सपनोंवाले इस आदमी से कन्नी काटता है। कुछ आधारभूत मूल्य और कुछ ओज भरे सिद्धांत हैं, जिनसे यह किताब ग्रंथ बनती है और जिनको बहुत दुरूह मान व कहकर हम उससे दूर भागते हैं। एक समानान्तर प्रवाह पर गौर करें तो एक वैश्विक बिरादरी आकार ले रही है, जो कहती है कि—वैकल्पिक दुनिया सम्भव है। यह बिरादरी किस प्रकार और अधिक व्यापक हो, भीतर की यह प्रेरणा हमें गांधी का अवगाहन करने के लिए बाध्य करती है। आखिर आप उस पर्वत से कैसे टकरा सकते हैं, जिससे टकराकर अपना ही सिर फूटना निश्चित है? 'सत्य को मैं जैसा देखता हूँ, वही मेरे लिए उसका प्रमाण है। सारी दुनिया उसके विपरीत दिशा में जा रही है। मुझे उसका डर नहीं है क्योंकि जब अंत नजदीक आ जाता है तो पतिंगा दीये की चारों ओर अधिक चक्कर लगाने लगता है। अगर पतिंगे जैसी स्थिति से भारत को न भी बचाया जा सके, तो भी भारत और उसकी मार्फत सारी दुनिया को इस नियति से बचा लेने की मेरी कोशिश अंतिम साँस तक चलती रहेगी, यही मेरा धर्म है।'

मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि गांधी के इस धर्म की दुरूहता को आसान करने के लिए एक विशिष्ट अभिगम और सम्पूर्ण वैज्ञानिक दृष्टिकोण आवश्यक है। 20वीं सदी के आरम्भिक वर्षों में लिखे गये उन बेचैन शब्दों को 21वीं सदी में समझने के लिए जिस बारीकी की जरूरत पड़ती है, उसके अभाव में कोई आश्चर्य नहीं कि हम शब्दों की सीमाओं में ही उलझे रह जायँ और परिभाषाएँ तथा व्याख्याएँ अधोगामी हो जायँ। आज की दुनिया के समाज, बाजार बनते जाने को अभिशापित हैं। सब कुछ हमें बाजार में उपलब्ध कराये जाने के दावे हवा को प्रदूषित किये हुए हैं। अलग बात है कि बाजार अब केवल व्यापार नहीं करता। पहले वह हमारी जरूरतें गढ़ता है फिर उनकी पूर्ति करने का पूँजीवादी खेल खेलता है। बड़ी बारीकी से देखकर गांधी ने कहा था कि यह शैतानी सभ्यता है और एक दिन यह खुद को नष्ट कर देगी। हिन्द स्वराज के ये दो वाक्य आज की दुनिया के सामने साफ चेतावनी बनकर उभरते हैं। जी हाँ, यह सभ्यता खुद को नष्ट करने के मार्ग पर कई पड़ाव तय कर आयी है। बारूद के ढेर पर बैठी इस सभ्यता का 'शैतान' मुस्कुराने लगा है। वह देख रहा है कि मनुष्य प्रकृति से खेलते-खेलते विनाश के कगार पर आ पहुँचा। कैसी कारसाजी है? पहाड़ों को काट डाला, नदियों को सोख डाला, धरती को छेद डाला, घर को दूकान और नगर को बाजार बना डाला। बच गये गाँव तो उन्हें निर्जन कर डाला। स्वर्ग के सारे सुख धरती पर ही उपलब्ध करा देने के दम्भ में बाजार की छाती फूली जा रही है और शैतान हँस रहा है। इस अट्टहास को कोई सुनना नहीं चाहता, जो त्रासद विनाश की पूर्व सूचना भर है। इस सभ्यता की ऊँचाई अब आकाश छूने लगी है और हमारी आँखें कंगूरों पर ही लगी हैं। शैतान की लपलपाती हुई जीभ इधर पाँवों में अपना जहर बाँटने के काम में चुपचाप लगी हुई है। कभी-कभी एक शोर उठता है—सुनामी और भूकम्प की आवाजें अभी कम पड़ रही हैं, पर गांधी का बनाया ब्लू प्रिंट भी साथ-साथ फैलता ही जाता है। न देख पानेवालों की आँखों में जो दोष आ गया है, पीढ़ियाँ उसकी पहचान करने से कतरा रही हैं। बिल्ली झपट्टा मारने ही वाली है और कबूतर ने आँखें बंद कर रखी हैं। आँखें बंद करके देखे जानेवाले सपने जीवंत नहीं, आभासी होते हैं। यह चित्र मानवता के भवितव्य की ओर संकेत करता है। सत्य से आँखें चुराना भी तो शैतान की सभ्यता है। →

कस्तूरबा गांधी का 150वाँ जन्मदिन

गांधीजी का जन्म 1869 में 2 अक्टूबर को पोरबंदर में हुआ था। उससे 6 महीने पहले सम्भवतः 11 अप्रैल 1869 को (गूगल के अनुसार) पोरबंदर में गांधीजी के घर से कुछ ही दूर कस्तूरबा जन्मी थीं। ऐसा नहीं कि मोहनिया और कस्तूर पति-पत्नी बनने के बाद पहली बार एक-दूसरे से मिले थे। वे बचपन से ही साथ खेलते थे, एक-दूसरे को छोटा-बड़ा होने के सवाल पर झगड़ते थे। उनके परिवारिक संबंध थे। एक-दूसरे को पसंद करते थे। लेकिन दोनों को पहली बार तब पता चला कि उनका वैवाहिक संबंध होने जा रहा है जब विवाह के मंडप में आमना-सामना हुआ। एक-दूसरे के बारे में सोचा उसका उल्लेख मैंने कस्तूरबा पर सद्य प्रकाशित उपन्यास 'बा' में किया है (राजकमल प्रकाशन, दरियागंज, दिल्ली-2)। यह उपन्यास मनोरंजक भी है और स्वाभाविक भी।

कस्तूरबा के बारे में सामान्य रूप से यही मान्यता है कि गांधीजी की अनुगामिनी थीं। थीं, पर अंधअनुगामिनी नहीं थीं। सहधर्मिणी थीं। उनका एक स्वतंत्र व्यक्तित्व भी था, जिसे खोजना पड़ता है। उनके स्वतंत्र विचार थे, वहां कोई समझौता नहीं था। 'बा' को लिखते हुए मैंने इस संदर्भ में कई खोज एवं साक्षात्कार भी किया। यह मेरा ही मत नहीं है, बल्कि इस उपन्यास को लिखते हुए जिनसे मार्गदर्शन लिया वे भी कमोबेश इसी मत के हैं। इस उपन्यास को लिखने में मेरा मार्गदर्शन ऐसी दो विभूतियों ने किया जो 'बा' के साथ आश्रमों में रहे थे। उनमें एक थे, महादेव भाई के स्वनामधन्य पुत्र नारायण भाई और दूसरे हैं गांधीजी के सहयोगी व साथी दादा धर्माधिकारी के यशस्वी पुत्र न्याय. चन्द्रशेखर धर्माधिकारी। धर्माधिकारीजी से मुझे सामग्री भी मिली और सुझाव भी।

हम लोग 'बा' के उन चित्रों को देखकर सोचते हैं जिनमें वे पैरों की मालिश करती हुई नजर आती हैं। वही समर्पण से अधिक आत्मीयता थी। यही उनका वास्तविक स्वरूप है। उनके अंदर स्वतंत्र निर्णय लेने की प्रेरणा और साहस भी है। गांधीजी ने स्वयं स्वीकार किया है कि मैं बा के बिना कुछ नहीं। यह सच है कि बा आश्रमों में रहने के कारण गांधीजी की परछाई रहीं, पर उनमें चारित्रिक दृढ़ता है, जो कम महिलाओं में मिलती है। वनमाला पारिख ने उनके बारे में लिखा है कि 'बापू के गर्विष्ठ पति होते हुए भी जब जरूरत हुई बा उन्हें चेतावनी देने में पीछे नहीं रहीं।' उपन्यास में ऐसे बहुत से स्थल हैं जहां उनके व्यक्तित्व की दृढ़ता और आत्मनिर्णय की शक्ति के दर्शन होते हैं। अरुण गांधी, बापू के पौत्र और पौत्रवधु ने एक 'द फारगॉटन वूमेन' नाम से उनके जीवन की संघर्ष-कथा लिखी है, जो मेरे लिए अत्यधिक मार्गदर्शक रही है। इस पुस्तक के शीर्षक में ही अपनी दादी के प्रति समाज की उपेक्षा का दर्द व्यक्त होता है। मैंने प्रयत्न किया है कि मैं भी उस महान व्यक्तित्व के बारे में जो कुछ जान सकूँ, उसको बताकर समाज पर चढ़ा मातृ-ऋण चुकाऊँ। हम लोग बापू के बारे में अनर्गल कहते-सुनते हैं, बा के बारे में लोग न कहें और उनके जीवन को सही परिप्रेक्ष्य में समझें।

मैं चाहता हूँ अरुण गांधी का भारतीय समाज के प्रति उपरोक्त उपालंभ का, जिसमें शायद गांधी परिवार के सदस्यों की वेदना छिपी है, कुछ प्रतिकार हो सके। देश में पुरुष नेताओं और विभूतियों की शताब्दियाँ मनायी जाती हैं, पर उन महिलाओं की नहीं मनायी जातीं, जिन्होंने शान्त रहकर समाज के निर्माण में गुप्त योगदान दिया। 'बा' उपन्यास के माध्यम से बा का जीवन सामने है। संकटों, अंतर्द्वन्द्वों से हुआ है। हो सकता है कुछ महिलाओं और पुरुषों के मन में यह विचार आये कि बापू की 150वीं वर्षगांठ के साथ बा की भी 150वीं जयन्ती मनाकर हम लोग अपने ऊपर से उपरोक्त दाग हटाने में कामयाब हो सकें कि वे हमारे लिए एक भूला हुआ चरित्र मात्र हैं।

–गिरिराज किशोर

→ इधर शैतानी और बाजारू सभ्यता का दुर्निवार सत्य पाँव जमा कर खड़ा है। बचने की राह तलाशे या नहीं, यह सभ्यता सोचे क्योंकि विकास तो उसका ही होना है। सत्यशोधक की भूमिका के साथ न्याय करके, अपने प्रति अन्याय पीकर गांधी जा चुके हैं। पर कहते हैं कि विचार नहीं मरते। एक विचार पुंज है, जिसमें जीवन की सभी सम्भावनाएँ निहित हैं। देश की व्यवस्था पर यह लांछन है कि वह अपने लिए जब मॉडल ढूँढ़ती है तो उसे कभी मार्क्स दिखते हैं, कभी लेनिन, कभी हो ची मिन्ह, तो कभी कोई, तो कभी कोई। उसे केवल गांधी का मॉडल नहीं जमता बाकी सब तो ठीक ही है। सत्य नहीं जमता, अहिंसा नहीं जमती इसलिए यह सब कहनेवाला भी नहीं जमता। यह सब होते हुए भी, वह गांधी ही है जो मरने के बाद भी अपनी कब्र से बोलूँगा, कहते हुए इस सभ्यता को रसातल में जाने से रोकने की अपनी कल्पना लिखकर जाता है। विचारपुंजों ने अपनी रोशनी से धराधाम को रोशन तो किया पर रोशनी की दिशा खुद की ओर नहीं मोड़ी। गांधी यहीं बाकी सबसे अलग हो जाते हैं। नयी सभ्यता के लिए उन्होंने हिन्दुस्तान को तैयार ही नहीं पाया। इसीलिए अपने देशवासियों को खाने, पहनने, रहने...यहाँ तक कि पाखाना जाने का ढंग भी लिख कर बताया। सरकारें तो कुछ नहीं मानतीं। पर समाज भी क्यों नहीं मानता, यह बड़ा सवाल है। आज जरूरत इस बात की है कि गांधी को उनके वास्तविक स्वरूप में जाना जाय और गांधी को गांधी ही रहने दिया जाय।

❑

रक्षा एवं खुदरा क्षेत्र में शत-प्रतिशत विदेशी निवेश राष्ट्र के साथ धोखा

भारत सरकार ने खुदरा एवं रक्षा क्षेत्र में शत-प्रतिशत विदेशी निवेश की मंजूरी देकर देश की जनता की पीठ में छूरा भोंका है। यह कदम देश के साथ धोखा एवं गुलामी की मानसिकता का परिचायक है।

सर्व सेवा संघ (अ. भा. सर्वोदय मंडल) के अध्यक्ष **श्री महादेव विद्रोही** ने सरकार के इस निर्णय पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए कहा है कि इस मूर्खतापूर्ण कदम से लाखों छोटे व्यवसायी बेरोजगार हो जायेंगे एवं उनके परिवार उजड़ जायेंगे। वहीं रक्षा जैसे संवेदनशील क्षेत्र में विदेशियों के प्रवेश से हमारी संप्रभुता एवं सुरक्षा संकट में आ जायेगी। संरक्षण क्षेत्र किसी भी देश का अति गोपनीय क्षेत्र होता है। इसमें किसी विदेशी कंपनी को प्रवेश की अनुमति देना अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारने जैसा है।

जिन-जिन देशों में खुदरा क्षेत्र को विदेशी कंपनियों के लिए खोला गया है उन देशों की आर्थिक स्थिति तो खराब हुई ही है साथ ही वालमार्ट जैसी कंपनियों ने देश में घुसकर न सिर्फ अर्थव्यवस्था को तहत-नहस किया है बल्कि राजनैतिक दखलअंदाजी भी कर रही हैं। इन कंपनियों का व्यापार कई देशों के सकल घरेलू उत्पाद (GDP) से भी ज्यादा है। अतः इनसे सावधान रहने की जरूरत है।

जो लोग कल तक स्वदेशी की बात करते थे और अपने को सबसे बड़ा राष्ट्र-प्रेमी बता रहे थे उनके इस कदम ने साबित कर दिया है कि यह सब दिखावा मात्र था। साफ शब्दों में कहें भारतीय जनता पार्टी की सरकार का यह कदम राष्ट्रद्रोह से कम नहीं है।

ऐसा लगता है कि देश में बढ़ रही बेतहाशा महँगाई, बेरोजगारी एवं साम्प्रदायिक तनाव से जनता का ध्यान बटाने के लिए सरकार ने योजनापूर्वक यह कदम उठाया है। लेकिन सरकार को यह नहीं समझना चाहिये कि जनता मूर्ख है और वह उसके हर कदम का समर्थन करेगी।

सर्व सेवा संघ सरकार से इस निर्णय को तुरंत वापस लेने तथा जनता से माफी माँगने की माँग करता है।

–भवानी शंकर कुसुम
राष्ट्रीय प्रवक्ता, सर्व सेवा संघ

जाति-भेद मिटाने के लिए हम सब शूद्र बन जायें

''जाति-भद ने हमारे अन्दर इतनी गहरी जड़ जमा ली है कि उसकी छूत मुसलमानों, ईसाइयों और भारत के दूसरे धर्मावलम्बियों को भी लग गयी है। यह सही है कि वर्णभेद न्यूनाधिक मात्रा में संसार के अन्य भागों में भी पाया जाता है। मतलब यह कि यह एक ऐसा रोग है, जो मानव-जाति में व्याप्त है। इसका निराकरण सच्चे अर्थ में धर्मात्मा बनने से ही हो सकता है। इस प्रकार के व्यवधानों और भेदभाव के लिए मुझे तो किसी भी धर्म के शास्त्रों में कोई स्वीकृति नहीं दिखायी दी है।''

''धर्म की आँखों में सभी मनुष्य बराबर हैं। विद्या, बुद्धि या धन के बल पर कोई भी यह दावा नहीं कर सकता है कि वह उनसे बड़ा है, जिनके पास यह सब नहीं है। सच्चे धर्म के पुनीत परिमल से उस मनुष्य का जीवन सुरभित है और जिसे उसकी साधना ने निर्मल बना दिया है, वह तो अपने लाभ में उन सबके साथ हिस्सा बँटाने में ही अपना धर्म समझता है, जो उस लाभ से किसी अंश में भी वंचित है। और जब यह बात है तब तो हमारे इस पतन की आज की दशा में सच्चे धर्म की माँग यही है कि हम सब स्वेच्छापूर्वक अति शूद्र बन जायँ।''

(हिन्दू 19 सितम्बर, 1945) **–महात्मा गांधी**

गांधीजी और हिंसक प्रतिकार

मैं बहुत नम्रतापूर्वक अपने गुरु के लिए इतना ही दावा करूँगा कि गीता के उपदेश के निरंतर आचरण से उन्होंने वह आसक्ति एक हद तक सिद्ध कर ली है। इसलिए यद्यपि वे ब्रह्मचर्य का झंडा हमेशा बुलन्द रखते हैं, तो भी पवित्र वैवाहिक जीवन को आशीर्वाद दे सकते हैं। और यद्यपि वे विचार, कथनी और करनी में अहिंसा टस से मस नहीं होंगे, फिर भी अत्याचार के नीचे कुचले जाने वाले के हिंसक प्रतिकार को वे आशीर्वाद देंगे।

21-7-1940 **–महादेव देसाई**
(श्री श्रीनिवास शास्त्री के पत्र से)

नामसझी का नया दौर

❑ चिन्मय मिश्र

हर पुरानी चीज सूरज, पृथ्वी और समुद्र जैसी है, हर नयी चीज सूरज, पृथ्वी और समुद्र जैसी है, हर नयी चीज अपने दीर्घकालीन समकालीनों के पुण्य से प्रज्वलित है। **–लीलाधर जगूड़ी**

भारत के विदेश राज्यमंत्री और पूर्व सेनाध्यक्ष वी. के. सिंह ने दिल्ली स्थित अकबर रोड का नाम बदलकर महाराणा प्रताप के नाम पर करने की बात कहकर नया विवाद छेड़ दिया है। उनके इस गैरजिम्मेदाराना बयान को उनकी कार्यशैली व पिछले दो वर्षों की उपलब्धता के नजरिए से देखा जाए तो परिणाम 'शून्य' ही निकलेगा। वे पहले भी तमाम विवादास्पद बयान दे चुके हैं। उनका एक भी वक्तव्य हमारी विदेश नीति की प्रासंगिकता को व्याख्यायित नहीं कर पाया है।

भारत में सामंती मनोवृत्तियाँ फिर से जोर मार रही हैं। एक ओर पाठ्य-पुस्तकों से पहले प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू को हटा दिया जाता है वहीं दूसरी ओर महात्मा गांधी के हत्यारे नाथूराम गोडसे का नाम भी हटा दिया जाता है। गुड़गाँव के गुरुगाँव हो जाने से क्या वहाँ कानून व्यवस्था और पर्यावरण की हालत में कोई सुधार आ गया?

इतिहास से आँखें चुरानेवाले अंतत, स्वयं ही इतिहास द्वारा कूड़े के ढेर में फेंक दिए जाते हैं। अकबर का भारत में शासन एक तरह से यहाँ का स्वर्णकाल कहलाता है। वहीं दूसरी ओर उनकी और महाराणा प्रताप की आपसी लड़ाई, घृणा नहीं कुतुहलता जगाती है। इतिहास में जाकर देखिए तो पता चलेगा कि अकबर का सिपहसालार कौन से धर्म का था और महाराणा प्रताप का किस धर्म का? क्या ये दोनों महान शासक कोई धार्मिक युद्ध लड़ रहे थे? इसके बाद औरंगजेब बनाम शिवाजी के संघर्ष को गौर से देखिए। इन दोनों की फौजों की वास्तविकता की जाँच कीजिए। हमें पता लग जाएगा कि शिवाजी के बड़े लड़ाकों में कितने मुसलमान थे और औरंगजेब की सेना में कितने हिन्दू। इतना ही नहीं इतिहास से हमें बड़ी रोचक व चौंका देनेवाली जानकारियाँ भी मिलती हैं, जैसे कि औरंगजेब के दरबार में जितनी संख्या में हिन्दू थे उतने किसी भी अन्य मुगल बादशाह के दरबार में नहीं थे, अकबर के दरबार में भी नहीं।

परन्तु हमारे यहाँ कथित राष्ट्रीयता का दौरा-सा पड़ा हुआ है। हर चीज को देखने का एक ही नजरिया बनता जा रहा है। सामान्यतया मधु किश्वर की अधिकांश टिप्पणियाँ बहुत ही अधकचरी और कई बार गैर जिम्मेदाराना होती हैं। परंतु योग दिवस (21 जून) पर मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा जारी दिशानिर्देशों पर उन्होंने सटीक टिप्पणी करते हुए कहा है *''सभी लोगों के लिए स्वीकार्य बनाने के चक्कर में हमें योग को महज व्यायाम का एक तरीका बनाकर इसके महत्त्व को कम नहीं करना चाहिए। योग जीवन का एक दर्शन है, विशिष्ट तौर पर हिन्दू धर्म का।''* इस बीच ''ॐ'' के उच्चारण को अनिवार्य न रहने की बात कही है। परंतु क्या इसके बिना योग कर पाना सम्भव है? हमारे यहाँ शताब्दियों से चली आ रही सामाजिक समरसता और सौहार्द्रता के पीछे तो कुछ लोग लट्ठ लेकर पिल पड़े हैं। इस बीच किसी मौलाना ने कह दिया कि मुसलमान रामदेव की औषधियों का प्रयोग न करें क्योंकि उसमें गौमूत्र का प्रयोग होता है, जो कि इस्लाम में हराम है। इसका सीधा-सा अर्थ यही निकल रहा है कि भारत धीरे-धीरे अपनी वास्तविक समस्याओं की ओर से मुँह मोड़कर संकीर्णतावादी सोच की ओर अग्रसर हो रहा है। इसमें राजनीतिज्ञों और धर्मगुरुओं का फायदा है। राजनीतिज्ञ रोटी-पानी-कपड़ा-रोजगार के बारे में उठे सवालों से बच जाते हैं और धर्मगुरुओं की अपने धर्मावलम्बियों पर पकड़ और भी मजबूत हो जाती है।

लीलाधर जगूड़ी लिखते हैं,

पुराने में भी कौन सबसे ज्यादा पुराना है
नये में भी कौन नया सबसे ज्यादा नया है
जो गल गया है वह नश्वर था, पुराना नहीं
पुराना लाखों साल नये को जीवन दे सकता है।

गौरतलब है भारतीय संविधान, ''सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता'' की बात करता है। ऐसे तमाम लोग जिनके पास रसूख है वह अपनी बात करने व उसे मनवाने के लिए किसी भी हद तक जा रहे हैं। लेकिन आदिवासियों और अन्य वंचित वर्गों की स्थिति दिनोंदिन बद् से बद्तर होती जा रही है। इसके बावजूद हम अभी भी सड़क, चौराहा, हवाईअड्डों, बंदरगाहों और सरकारी योजनाओं के नामकरण को ही जीवन-मरण का प्रश्न बना रहे हैं। यह अत्यन्त विचित्र स्थिति है कि जहाँ एक ओर महात्मा गांधी के 150वें जन्मदिन मनाने की तैयारियाँ शुरू हो गयी हैं वहीं दूसरी तरफ उनके हत्यारे की छवि को देश की जनता खासकर बच्चों के दिमाग से हटाने का षड्यंत्र रचा जा रहा है। भविष्य में बच्चों को पता ही नहीं होगा कि उस प्रधानमंत्री का क्या नाम है, जिसने पहली बार लालकिले से आजाद भारत का तिरंगा फहराया और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को किस वहशी दरिंदे ने मार डाला था।

इस प्रकार से हम अपने समाज को शून्यता के उस दौर में ले जायेंगे जिसमें उसकी न तो अपने अतीत के प्रति कोई जिज्ञासा होगी, न वर्तमान से लगाव और न ही भविष्य के प्रति कोई कुतुहल। यह समाज क्या विचारवान मनुष्यों का होगा? डॉ. राममनोहर लोहिया ने कहा था, *''भारतीय*

स्थिति की एक खासियत यह है कि लम्बे अरसे से भारतीय लोगों का अपना कोई राज नहीं रहा। लगभग एक हजार सालों तक कोई भारतीय राज्य नहीं था। जब भी कोई परदेशी शासन देशी बनने लगता, कोई नया हमलावर आकर उस पर हॉवी हो जाता। सारी व्यवस्था फिर गड़बड़ हो जाती''। वे मानते थे कि शक्तिहीन देशी और विजेता पर देशी के बीच के चलनेवाले इस निरंतर संघर्ष को गलत ढंग से हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष कहा जाता है। जबकि हिन्दू-मुस्लिम संघर्ष इस प्रक्रिया का एक गौण रूप भर है। उन्होंने स्पष्ट तौर पर कहा था, *''लम्बे समय तक देशी राज्य के अभाव को न तो झूठे संतोष में डूबे मुसलमान ने पहचाना, न रोग की असलियत को न जाननेवाले हिन्दू ने।''*

अब जबकि भारत का संविधान बनकर पूरी शिद्दत से लागू हो गया है तो हमें एक ऐसे राष्ट्र की परिकल्पना को हर हालत में मूर्त रूप देना होगा जो कि अपनी सूरत और सीरत दोनों में देशी हो। परंतु हम तो विरोधाभासों के बल पर राष्ट्र की एकता को मजबूत करना चाहते हैं। अकबर और महाराणा प्रताप अपने युग की सच्चाई हैं और उन्हें तत्कालीन परिस्थितियों और काल के हिसाब से समझना होगा और उनका मूल्यांकन करना होगा। सड़क का नाम अकबर से हटाकर महाराणा प्रताप या महाराणा प्रताप से अकबर कर देने से देश नहीं बनेगा। देश तो इन दोनों के नाम से समानांतर सड़कें बनाने अर्थात् उनकी सोच के आधार पर भविष्य का मार्ग बनाने से बेहतर आकार लेगा। अकबर अपने मूल स्वरूप व स्वभाव में भारतीय हो चुका था, अतएव उसके बिना भारत का इतिहास अधूरा ही रहेगा और अधूरे इतिहास से पूरा देश नहीं बनता। गौर करिए,

अक्सर यह सोचना होता है
कि हम कितने नये और कैसे नये हैं
हमने कितना पुरानापन देखा है
क्योंकि एकदम नया काफी कोरा होता है। ❑

बीज बचेगा तो हम बचेंगे

❑ निक डियरडेन

वेनेजुएला की प्रगतिशील राष्ट्रीय असेम्बली (संसद) के भंग होने के कुछ ही समय पूर्व सदस्यों ने एक ऐसा कानून पारित किया जो कि एक वास्तविक लोकतांत्रिक खाद्य प्रणाली की नींव रखेगा। देश ने न केवल जीनांतरित (जी.एम.) बीजों को प्रतिबंधित कर दिया बल्कि एक ऐसा लोकतांत्रिक ढाँचा भी तैयार कर दिया है जो कि यह सुनिश्चित करेगा कि बीजों का निजीकरण न होने पाए एवं देशज ज्ञान को कारपोरेट्स को न बेचा जा सके। राष्ट्रपति मोडुरो ने नये वर्ष के पूर्व इस प्रस्ताव को कानून बनाने की मंजूरी दे दी क्योंकि इसके बाद वहाँ मोडुरो विरोधी सदन शपथ लेनेवाला था। गौरतलब है ह्युगो शावेज के दिनों से ही वेनेजुएला कृषि व्यापार (एग्रीबिजनेस) के खिलाफ रहा है। इस दौर में यहाँ का सन् 2004 में 5 लाख एकड़ में मोन्सेंटो मक्का की पैदावार रोकने का निर्णय अत्यन्त प्रसिद्ध हुआ था। वास्तव में देश के लिए शावेज की औपचारिक रणनीति यह थी कि वे उत्पादन के एक ऐसे पर्यावरणीय समाजवादी मॉडल की बात करते थे जो कि मानव एवं प्रकृति में आपसी सामंजस्य बैठाता हो। इसका एक मात्र लक्ष्य था खाद्य सार्वभौमिकता या खाद्य उत्पादन पर लोकतांत्रिक नियंत्रण।

लेकिन यह देश में कृषि व्यापार को पैर जमाने से नहीं रोक पाया। विशाल कृषि व्यापार ने एक तरह से एक ऐसा युद्ध ही छेड़ दिया जिसके माध्यम से वे विश्वभर में जीवन के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण आधार ''बीज'' पर पूर्ण एकाधिकार प्राप्त कर लें। कृषि व्यापार समूह अफ्रीका, लेटिन अमेरिका, एशिया और यूरोप तक में नये व कठोर बौद्धिक सम्पदा कानूनों की वकालत कर रहे हैं, जिससे कि वह अधिक आसानी से पारम्परिक ज्ञान एवं संसाधन प्राप्त कर उन्हें पेटेंट करवा कर, उनसे प्राप्त लाभ पर अपना एकाधिकार जमा लें।

कृषि व्यापार समूह देश के सांसदों के साथ इस प्रकार से ढोंग रच रहा था जिससे कि जी. एम. बीजों को इस आधार पर अनुमति मिल जाए कि इन बीजों के माध्यम से, देश जो वर्तमान में खाद्य संकट से जूझ रहा है, उससे मुक्ति मिल जाएगी। लेकिन वेनेजुएला में एक दमदार किसान आंदोलन जो अंतर्राष्ट्रीय किसान नेटवर्क, ला विआ केम्पेसिना के अंतर्गत कार्य करता है, ने जोरदार मुँहतोड़ जवाब दिया। उन्होंने सन् 2013 के एक कानून को पारित ही नहीं होने दिया जिसके बाद ''पिछले दरवाजे से जी. एम. को प्रवेश मिल जाता।'' इतना ही नहीं उन्होंने दो वर्षों तक चली एक लोकतांत्रिक पहल के माध्यम से सांसदों, आंदोलनकारियों, किसानों और देशज समूहों को साथ में शामिल कर एक वास्तविक प्रगतिशील बीज कानून भी तैयार करवा दिया।

इसके परिणामस्वरूप क्रिसमस के पहले यह कानून पारित हो गया। यह कृषि पारिस्थितिकी प्रणाली को प्रोत्साहित करता है। यह एक ऐसा कृषि स्वरूप है जो प्रकृति के सान्निध्य में कार्य करता है और रासायनिक खादों, कीटनाशकों एवं एकल फसलों को नकारता है। इस कानून का लक्ष्य है देश को अंतर्राष्ट्रीय खाद्य बाजरों से स्वतंत्र कराना। इस कानून ने बीजों का निजीकरण गैरकानूनी करार दिया है और यह इसके एवज में लघु एवं मध्यम स्तर की कृषि एवं जैवविविधता→

नशाबंदी : पीड़ा भी अपनी दोष भी अपना!

❑ अशोक शरण

देश में दिन-प्रतिदिन नशे की प्रवृत्ति बढ़ती जा रही है और इसका अधिकतर शिकार युवा वर्ग हो रहा है। युवा भारत हमारी सबसे बड़ी शक्ति है और इसी आधार पर हम विश्व पटल पर एक बड़ी आर्थिक शक्ति के रूप में उभर कर सामने आ रहे हैं। लेकिन इसके विरुद्ध एक षड्यंत्र भी रचा जा रहा है और हमारे युवाओं को नशे की लत लगाकर निकृष्ट बनाया जा रहा है। सबसे अधिक आक्रमण तो पड़ोसी देशों की सीमाओं से हो रहा है जिसका जीता जागता उदाहरण पंजाब के युवा हैं।

हमारे संविधान के भाग 4 अनुच्छेद 47 में राज्यों के लिए दिए गए नीति निर्देशक सिद्धान्तों में नशाबंदी का विषय रखा गया है। इसका अर्थ है कि नशाबंदी के लिए कोई कार्य करना है, या कोई कानून बनना है तो यह संबंधित राज्य सरकारों की जिम्मेदारी है। इसमें केन्द्र सरकार कोई दखल नहीं दे सकती। इसी आधार पर गुजरात, नगालैंड, बिहार, मणिपुर, केरल आदि राज्यों में कहीं पूर्ण तो कहीं आंशिक नशाबंदी है। इसके अतिरिक्त आंध्रप्रदेश, मिजोरम और हरियाणा आदि प्रान्तों में समय-समय पर पूर्ण नशाबंदी लागू रही है। तमिलनाडु में विधानसभा के लिए चुनाव हो रहे हैं। वहाँ के लगभग सभी राजनैतिक दलों ने आश्वासन दिया है कि यदि वे सत्ता में आये तो राज्य में नशाबंदी लागू करेंगे।

नशाबंदी का विषय समाजशास्त्रियों, सामाजिक कार्यकर्ताओं के साथ ही साथ राजनैतिक आन्दोलनकारियों एवं दलों को भी उद्वेलित करता रहता है। ऐसा नहीं है कि यह केवल हमारे देश की समस्या है, विश्व के किसी न किसी भाग में यह समस्या हमेशा रही है।

बीसवीं शताब्दी के आरम्भ में वर्ष 1920 से 1933 तक संयुक्त राज्य अमेरिका में नशाबंदी लागू थी। वहाँ ऐसा शराब, ड्रग्स, जुए की आदत तथा अन्य कई सामाजिक बुराइयों से बचने के लिए किया गया था। शराब के उत्पादन, बिक्री और एक स्थान से दूसरे स्थान तक ले जाने पर पूर्ण प्रतिबन्ध था। आश्चर्य का विषय है कि यह आन्दोलन वहाँ के राजनैतिक दलों (डेमोक्रेट व रिपब्लिकन) के ग्रामीण क्षेत्रों में रहनेवाले प्रोटेस्टेंट तथा अपने आपको सामाजिक रूप से प्रगतिशील कहनेवाले लोगों द्वारा किया गया। इसमें महिलाओं का बहुत बड़े पैमाने पर सहयोग मिला क्योंकि उनकी मान्यता थी कि इससे घरेलू हिंसा, मानसिक प्रताड़ना आदि में कमी आयेगी और परिवार, बच्चों तथा महिलाओं की अधिक सुरक्षा होगी। उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में लगभग ऐसी ही परिस्थितियों में यूरोप के अन्य देशों में भी नशाबंदी रही लेकिन यह प्रतिबन्ध ज्यादा दिन नहीं चले। इनमें प्रमुख रूप से हंगरी, नॉर्वे, फिनलैंड, सोवियत रूस आदि देश शामिल थे।

नशाबंदी के जिस कानून को सन् 1920 में अमेरिका के अठारहवें संविधान संशोधन के रूप में लागू किया गया था उसके तेरह वर्ष बाद तत्कालीन अमेरिकी

→को प्रोत्साहित करता है। इसका अनुच्छेद 8, ''भाईचारे की भावना तथा बीजों के मुक्त आदान-प्रदान को प्रोत्साहित करता है तथा बीज का बौद्धिक या पेटेंट सम्पत्ति या निजीकरण आदि किसी भी अन्य प्रकार के रूप में निषेध करता है।''

वेनेजुएला का यह प्रयास कई मायनों में अत्यन्त प्रभावशाली है क्योंकि सर्वप्रथम यह इसलिए कि इस समय देश अत्यन्त भीषण खाद्यसंकट से गुजर रहा है। इसके परिणामस्वरूप इसकी अंतर्राष्ट्रीय बाजारों पर निर्भरता काफी बढ़ गयी है और देश के भीतर और बाहर से वेनेजुएला को लगातार अस्थिर करने के उपाय किये जा रहे हैं। एक टिप्पणीकार का कहना है, ''वेनेजुएला के लोगों को ताबड़तोड़ खाद्य उत्पादन बढ़ाने के छलावे से बेवकूफ नहीं बनाया जा सकता।'' खाद्य सार्वभौमिकता तो तभी प्राप्त की जा सकती है कि जबकि कृषि की सघन प्रणालियों को लम्बी अवधि के लिए अपनाया जाए।

यह कानून इसलिए भी महत्त्वपूर्ण है क्योंकि इसकी वजह से वेनेजुएला में निर्णय लेने की प्रक्रिया एकदम जमीनी स्तर तक पहुँच गयी है। अब बीजों के नियमन में सामान्य नागरिकों की भी शाश्वत भूमिका तय हो गयी है। सत्ता के विकेन्द्रीकरण हेतु एक लोकप्रिय परिषद का गठन किया गया है जो कि अधिकारियों और राजनेताओं के साथ मिलकर एक दीर्घकालिक नीति का निर्माण करेगी। अंततः वेनेजुएला को यह भान हो गया है कि खाद्यसुरक्षा के विचार को वास्तविकता में बदलने का एकमात्र रास्ता आर्थिक लोकतंत्र है। ऐसे सारे देश जो कि कृषि व्यापार से संघर्ष कर रहे हैं वेनेजुएला उनके लिए उम्मीद की एक मशाल है। *(सप्रेस/थर्ड वर्ल्ड नेटवर्क फीचर्स)* ❑

राष्ट्रपति रुजवेल्ट द्वारा संविधान के 21वें संशोधन के माध्यम से उसे समाप्त कर दिया गया। इसके पीछे मुख्य कारण यह था कि धीरे धीरे ऐसी मान्यता बन गयी कि इसे ग्रामीण प्रोटेस्टेंट वर्ग द्वारा शहरी लोगों पर थोपा गया है। इसकी आलोचना इसलिए भी होती थी कि यह शहरों में अपराध रोकने में नाकाम रहा। बल्कि अपराधों में बढ़ोत्तरी होती रही और पुलिस के खर्च ज्यादा हो गये। सन् 1929 की विश्व मंदी ने भी इस पक्ष को कमजोर किया था क्योंकि सरकार को कर से होनेवाली आमदनी भी बिल्कुल बंद हो गयी थी।

नशाबंदी के पक्ष और विपक्ष में सम्पूर्ण विश्व में लगभग एक जैसे तर्क दिये जाते हैं। फिर चाहे वह विकसित, विकासशील या अविकसित गरीब देश ही क्यों न हो। हरियाणा में सन् 1996 बंसीलाल ने कांग्रेस से अलग होकर हरियाणा विकास पार्टी बनायी और भारतीय जनता पार्टी के साथ मिलकर इस आश्वासन पर विधानसभा का चुनाव जीता कि यदि वे सत्ता में आये तो शराब के उत्पादन, बिक्री, खरीद और पीने पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा देंगे। उन्होंने ऐसा किया भी। परन्तु 21 महीने बाद सन् 1998 में इसे समाप्त भी कर दिया। तर्क वही जो अमेरिकी परिस्थिति में दिये गये थे। अमेरिका में तो तेरह वर्षों के बाद प्रतिबन्ध हटाये गये परन्तु यहाँ तो दो वर्ष के अन्दर ही प्रतिबन्ध हटाने पड़े। राजनैतिक दलों एवं अन्य के दबाव में जब बंसीलाल ने प्रतिबन्ध हटाया तो कहा कि जब लोग ही नशाबंदी नहीं चाहते तो राजस्व की बड़ी हानि का कोई औचित्य नहीं है।

बिहार में नितीश कुमार सरकार द्वारा नशाबंदी लागू किये 30 दिन से अधिक हो चुके हैं। वहाँ की रिपोर्ट भी डरावनी है। अभी तक छापेमारी अभियान में हजारों लीटर शराब जब्त की जा चुकी है। बिहार उत्पाद संशोधन अधिनियम 2016 का उल्लंघन करनेवाले 1309 लोगों को गिरफ्तार किया गया, 1278 व्यक्ति जेल भेजे जाने के साथ कुल 1500 मामले दर्ज किये गये। हाल फिलहाल तो इसे जनसमर्थन मिल रहा है। भारत के जनप्रतिनिधित्व कानून 1951 में भी नशाबंदी का जिक्र किया गया है। इसकी धारा 135 के अनुसार चुनाव समाप्त होने के 48 घंटे के मध्य किसी भी होटल, खाने का स्थान, दूकान या अन्य कोई सार्वजनिक या व्यक्तिगत स्थान से शराब न तो बेची जायेगी, न बाँटी जाएगी और न दी जाएगी। कोई भी व्यक्ति इसका संग्रह भी नहीं कर सकेगा। यदि ऐसी शराब पकड़ी जाती है तो उसका निपटारा कानून के अनुसार होगा। इस अनुच्छेद का उल्लंघन करनेवालों पर कार्यवाही की जाएगी जिन्हें 6 महीने की जेल या 2000 रुपये का जुर्माना या दोनों ही सजाएँ दी जा सकती हैं।

जिन राज्यों में नशाबंदी नहीं है वहाँ भी आंशिक रूप से कई त्योहारों के दिन नशाबंदी की जाती है जिसे प्रायः ड्राई डे के नाम से जाना जाता है। राष्ट्रीय स्तर पर स्वतंत्रता दिवस, गणतंत्र दिवस और गांधी जयंती के दिन नशाबंदी रहती है। दिल्ली सरकार ने लगभग ऐसे 27 त्यौहारों को चिन्हित किया है जिस दिन शराब की बिक्री, सेवन आदि पर सम्पूर्ण प्रतिबन्ध होता है। राज्य सरकारों ने शराब पीने की कानूनी न्यूनतम उम्र भी निर्धारित कर दी है जो अधिकतर राज्यों में 25 वर्ष है। हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड जैसे राज्यों में 18 वर्ष है जिसे बढ़ाया जाना चाहिए।

नशाबंदी और नशामुक्ति भारत में राजनैतिक दलों का एक अच्छा शगल रहा है। जब तक नशाबंदी रहती है तो कुछ छुट भैये राजनेता और अधिकारी गैरकानूनी तरीके से इसे प्रश्रय देकर पैसे कमाते हैं और जब नशाबंदी नहीं रहती है तो भी ठेके के माध्यम से पैसे कमाते हैं। नशामुक्ति के लिए भी राज्य सरकारों के पास सैकड़ों करोड़ रुपये का बजट होता है और स्थान-स्थान पर आपको नशामुक्ति केन्द्र देखने को मिल जायेंगे। लेकिन इनकी सफलता पर प्रश्नचिन्ह लगा हुआ है। यदि नशे की बुराइयों से लोगों और समाज को बचाना है तो जनजागरण के साथ-साथ इसके लिए कठोर कानून बनाने की आवश्यकता है। परंतु पहले से प्रचलित कानूनों के पालन को सुनिश्चित किया जाना चाहिए। राज्य सरकारें राजस्व अर्जित करने के चक्कर में पब संस्कृति को बढ़ावा दे रही हैं जिससे अधिकतर युवा ही प्रभावित हो रहे हैं। निष्कर्ष यही निकलता है कि देश के चहुँमुखी विकास के लिए नशे को प्रतिबंधित करना आवश्यक है। (सप्रेस)

उपवास सत्याग्रह

बालोद जिला सर्वोदय मंडल (छत्तीसगढ़) ने 5 एवं 6 अप्रैल 2016 को 36 घंटे का उपवास सत्याग्रह कार्यक्रम का सफल आयोजन किया। इस कार्यक्रम में डौडी लोहारा परिक्षेत्र के 32 सदस्यों सहित जिला सर्वोदय मंडल के पदाधिकारी, लोकसेवक एवं सर्वोदय मित्रों ने भाग लिया।

पिछले दिनों सर्व सेवा के अध्यक्ष श्री महादेव विद्रोही ने 'देश की वर्तमान स्थिति' पर गहरी चिन्ता व्यक्त करते हुए 5 एवं 6 अप्रैल 2016 को जंतर-मंतर, नई दिल्ली में 36 घंटे के उपवास पर बैठने की घोषणा की थी, तद्नुसार सर्व सेवा संघ ने उक्त तिथियों में उपवास सत्याग्रह का सफल आयोजन किया।

उल्लेखनीय है कि जिला सर्वोदय मंडल, बालोद द्वारा यह उपवास सत्याग्रह सर्व सेवा संघ द्वारा आयोजित उक्त उपवास सत्याग्रह के समर्थन में किया गया।

–मदनलाल साहू,
अध्यक्ष, बालोद जिला सर्वोदय मंडल

विदेशी कवि की अंग्रेजी कविता में हिन्दी शीर्षक क्यों दिखा?
डू ऑर डाई बनाम करेंगे या मरेंगे

❑ बद्रीनारायण तिवारी

भारत छोड़ो आंदोलन 1942 की चर्चा होते ही गोवालिया टैंक मैदान (अब परिवर्तित चर्चित अगस्त क्रान्ति मैदान) से जो स्वाधीनता का उद्घोष हुआ। उसे महात्मा गांधी ने 8 अगस्त 1942 को जो ऐतिहासिक भाषण दिया वह सर्वप्रथम हिन्दी में आरम्भ किया किन्तु सम्मेलन में अहिन्दी भाषी जनता की उपस्थिति देख कर अंग्रेजी में बोले थे। इसके अंग्रेजी अनुवाद में **''करेंगे या मरेंगे''** का स्वाभाविक रूप से **''डू ऑर डाई''** हुआ तत्पश्चात् जब इसका अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद हुआ उसमें यह **''करो या मरो''** हो गया जो अभी तक यही नारा जन चर्चा में प्रचलित है। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि गांधीजी ने अपने भाषण में **''करो या मरो''** न कहकर वरन् **''करेंगे या मरेंगे''** का ही प्रयोग किया था।

9 अगस्त 1942 को प्रातः 5 बजे अपनी गिरफ्तारी के पूर्व देश के नाम संदेश के नीचे गांधीजी ने स्वयं हिन्दी में लिखा था—**''करेंगे या मरेंगे।''**

महात्मा गांधी ने इस नारे की कितनी सुन्दर हृदय स्पर्शी विवेचना की उसे पढ़कर स्वयं अनुभव करेंगे। उन्हीं के शब्दों में—'यह एक छोटा-सा मंत्र देता हूँ। आप इसे अपने हृदय-पटल पर अंकित कर लीजिए और हर श्वांस के साथ उसका जाप किया कीजिए। यह मंत्र है, **''करेंगे या मरेंगे''** या तो हम भारत को आजाद करेंगे या आजादी की कोशिश में प्राण दे देंगे। कुछ लोगों की यह सहज प्रतिक्रिया हो सकती है कि **''करो या मरो''** और **''करेंगे या मरेंगे''** एक ही बात है। पर वास्तव में इन दोनों में एक पूरी विश्व दृष्टि का फर्क है। इसे स्पष्ट करने के लिए या उद्धृत पँक्ति बदल कर देखें शायद समझ में आये। या तो भारत को आजाद करो या आजादी की कोशिश में प्राण दे दो। जहाँ **''करेंगे या मरेंगे''** एक आत्मीय आह्वान है, वहीं **''करो या मरो''** में एक अधिनायक का आदेश **''करेंगे या मरेंगे''** में गांधी स्वयं शामिल हैं। यह व्यक्तिगत प्रण है, एक सुन्दर विश्वास जो सामूहिक मुक्ति की कामना का स्वप्न गढ़ता है। सबका अपना स्वप्न।

इस समय देश में तथाकथित जन आंदोलनों की बाढ़ आयी लगती है और गांधी बन जाने की व्यग्रता विभिन्न विकृतियों के साथ स्पष्ट परिलक्षित हो रही है। इसी सन्दर्भ में महात्मा गांधी के इन शब्दों में उसका यथार्थ चित्रण है—''मुझे उन लोगों का नेता या सेना की भाषा में कहें, तो सेनापति कहा जाता है, लेकिन मैं अपनी स्थिति को उस नजर से नहीं देखता। किसी पर हुक्म चलाने के लिए मेरे पास प्रेम के अलावा और कोई अस्त्र नहीं है। आप उसमें मेरा हाथ केवल तभी बँटा सकते हैं जब मैं आपके सामने आपके सेनापति के रूप में नहीं बल्कि एक विनम्र सेवक के रूप में आऊँ और जो सबसे अच्छी सेवा करता है वही बराबर की हैसियतवालों में प्रमुख हो जाता है।''

महात्मा गांधी के वक्तव्य में कितनी स्पष्टता से अपने को सेनापति नहीं बल्कि एक सेवक के रूप में वकालत की गयी हो, उसके बारे में ''करो या मरो'' जैसा सेनापतिनुमा आदेशात्मक अभिव्यक्ति स्वीकार कर लेना विकृत मानसिकता का प्रतीक है। उस आन्दोलन के प्रति गांधीजी के प्रयासों को नकारना ही माना जायेगा। वर्तमान समय में यह प्रयास जन-आंदोलन के साथ ही ''क्रान्तिकारी'' का कार्यक्रम और ''सत्याग्रह'' प्रारम्भ होने से पूर्व ही अपने को महिमा मण्डित स्थापित करने को प्रयासरत हो जाते हैं। इस प्रकार इस बाँझ व्यग्रता का अर्थ जनता भी समझने लगी है जैसा कि अभी निर्वाचन के पूर्व एक नवनिर्मित संस्था के कार्यों से समझने में देर नहीं लगी है। किन्तु इससे एक खतरा है ''जीत की हार'' का है।

इसी प्रसंग में एक रोचक और प्रेरक घटना का उल्लेख न करने से यह चर्चा अपूर्ण ही रहती है। भारत छोड़ो आन्दोलन के प्रारम्भ होने से दस दिनों के अन्दर ही 19 अगस्त 1942 को अमेरिका में प्रसिद्ध अफ्रीकी-अमेरिकी कवि **''काउंटी कलेन''** की एक अंग्रेजी की कविता प्रकाशित हुई थी। इस ऐतिहासिक अंग्रेजी कविता का शीर्षक गांधीजी के हिन्दी शब्दों को ज्यों का त्यों रखा—**''करेंगे या मरेंगे''** अंग्रेजी में जब कि हमारे देश के स्वनामधन्य विद्वान अनुवादक और इतिहासकार **''करो या मरो''** यानी **''डू ऑर डाई''** क्यों लिखने लगे? उस अंग्रेजी कविता का हिन्दी अनुवाद किया श्री राजेश कुमार झा ने जो **''जन सत्ता''** में **''करेंगे या मरेंगे''** शीर्षक प्रकाशित भी हुआ—

करेंगे या मरेंगे

–काउंटी कलेन

देता है कौन वाणी को उदात्तता
और शब्दों की महानता।
कौन मढ़ता है आभामंडल
शब्दों के चारों ओर?
कैसे बन जाती है कोई पुकार जादुई छड़ी,
खोल देती है बंद दरवाजों को।
कैसे वही शब्द मान लिये जाते हैं अनर्गल
बस इसलिए कि गूँज रहे होते हैं
वे कहीं और कर्कश
शायद बोलने चाले की त्वचा के रंग और?

आँखों, होंठ या एशियाई साँसों की
महक का है फर्क,
वरना क्यों जाती कहीं,
''करेंगे या मरेंगे'' नीची, ओछी
पश्चिम में गूँजे मुक्ति के उद्घोष
''आजादी दो या मौत'' से?
अपनी गुलाम धरती की तरह वंचित रूखी
क्या भारत की आवाज हो चुकी है,
इतनी दुर्बल, अर्थहीन, अभद्र।
कि दावा करते हैं आजादी के लिए
लड़ने का जो,
अनमने से सुन रहे हैं
युद्ध के इस आह्वान को
वहीं शब्द, जिन्हें सुनकर अंग्रेजी जुबान में।
उठा लिये थे हथियार दृढ़ निश्चय से/
उन्होंने कभी।

अमेरिका में प्रकाशित

19 अगस्त, 1942 इसी वर्तमान विद्रूपता के विषय में भी हरिमोहन झा के शब्दों में व्यक्त हुआ अजी! संस्कृत को अंग्रेजी खा गई, सम्वत् को ईसवी खा गई, धर्मशाला को होटल खा गया, रामलीला को सिनेमा खा गया, सेर को किलो खा गया, मन को कक्विंटल खा गया, गुरुकुल को कान्वेंट खा गया, पिता और माता को पापा-मम्मी खा गये, भोज को पार्टी और प्रणाम को टाटा खा गया। ❑

भू-क्रांति दिवस सम्पन्न

ग्राम मटंग, जिला दुर्ग (छत्तीसगढ़) में 18 अप्रैल को 'भू-क्रांति दिवस' मनाया गया। कार्यक्रम में रविशंकर विश्वविद्यालय, रायपुर के कुलपति श्री एस. के. पांडे ने भूमि दान देनेवाले गांव के 6 किसानों का सम्मान किया एवं अपने महत्त्वपूर्ण विचार रखे।

कार्यक्रम में रुक्मिणी सेवा संस्थान, डिमरापाल, बस्तर (छ.ग.) के अध्यक्ष श्री धर्मपालजी सहित सर्वोदय के कई साथी एवं स्थानीय किसानों ने भी भाग लिया।

–पंथराम वर्मा,
पूर्व अध्यक्ष, मध्य प्रदेश भूदान यज्ञ बोर्ड

आखिर कब तक चलेगा?

❑ **आदिल सरफरोश**

भारत में महिला उत्पीड़न की घटनाएँ अब कोई नयी बात नहीं हैं। छेड़छाड़, बलात्कार व दहेज-हत्या जैसी खबरें तो हमारी प्रिंट व इलेक्ट्रोनिक मीडिया का अहम हिस्सा बन गयी हैं। इन पर कुछ लिखना या कहना उचित नहीं होगा। देश में महिलाओं के साथ क्या चल रहा है, यह सब जानते हैं और इसमें कुछ छुपा भी नहीं है। आये दिन महिलाओं के साथ दिल दहलानेवाली वारदातें अखबारों की सुर्खियाँ बन रही हैं। कलयुग के इस दौर में लड़कियों और महिलाओं पर तेजाब फेंकने का एक नया रिवाज चल गया है। इस दृष्टि से देखा जाता है कि अमूमन एक तरफा प्यार में लड़का किसी लड़की के चेहरे पर तेजाब की बोतल उड़ेल कर अपनी दिमागी खुन्नस निकालता है। लड़के की इस मानसिक खुन्नस में लड़की को जिन्दगीभर के लिए जख्म मिल जाते हैं और लड़के को इस बात का संतोष कि जो मेरा न हो सका उसे किसी का नहीं होने दूँगा। हम इन सभी घटनाओं के लिए सरकार को दोषी ठहराकर अपनी जिम्दारी से मुँह मोड़ रहे हैं। बड़ी अजीब विडम्बना है, अपराध करें हम और आरोप लगायें सरकार पर। दिल्ली का गैंगरेप हो या लखनऊ के मोहनलालगंज की पाश्विक घटना या फिर बदायूँ की दो बहनों के साथ हुई अमानुषिकता जैसे नृशंस अपराधों ने यह स्पष्ट कर दिया है कि हमने कभी न सुधरने की कसम खाली हो। और जब हम नहीं सुधरेंगे तो बदलाव कैसे आयेगा? और जब बदलाव नहीं आयेगा तो फिर अच्छे दिन क्या आसमान से ओलों की तरह गिरेंगे?

देश में महिला शोषण की अन्य घटनाओं से परे महिलाओं को डायन घोषित कर निर्दयी एवं अमानुषिक ढंग से मौत के घाट उतारने की प्रथा भी तेजी से पैर पसार रही है। विकास और बदलाव की दहलीज पर खड़े भारत में जिस तेजी से औरतों को डायन मानकर उनका बेरहमी से कत्ल किया जा रहा है, उसके आँकड़े सुनकर पैरों तले से जमीन खिसक जायेगी। गत दिनों केन्द्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्री मेनका गांधी ने लोकसभा में इन आँकड़ों को उजागर करके संसद में बैठे माननीय को भी हैरत में डाल दिया। उन्होंने जानकारी देते हुए बताया कि गत तीन वर्षों के अन्दर देश के विभिन्न हिस्सों में महिलाओं को डायन मानकर उनकी हत्या करने के 519 मामले दर्ज किये हैं। रोंगटे खड़े कर देनेवाली इस तरह की जानकारी ने महिला सुरक्षा, महिला सम्मान, महिला अधिकार व महिला-पुरुष समानता की बात करनेवाले भारत के सामने एक प्रश्नचिह्न खड़ा कर दिया है। राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो के अनुसार वर्ष 2011 में 240 मामले, वर्ष 2012 में 119 मामले व वर्ष 2013 में 160 मामले दर्ज किये गये हैं। 2014 के मार्च तक आठ मामले भी दर्ज किये जा चुके हैं। यहाँ यह भी स्पष्ट करना उचित रहेगा कि कुल 519 मामलों में से आधे से ज्यादा यानी 315 मामले देश के चार राज्यों झारखण्ड, उड़ीसा, कर्नाटक व आन्ध्र प्रदेश में दर्ज किये हैं।

भारत में महिला को डायन मानकर उनकी हत्या करने की प्रथा नयी नहीं है। यह प्राचीन समय से चली आ रही है। शिक्षा के अभाव अंधविश्वास के नाम पर पत्थरों की देवी-देवताओं को खुश करने के लिए औरतों को डायन घोषित करके उनकी बलि दी जाती

है। ज्यादातर मामलों में पाखंडी व बहरूपिया किस्म के बाबा महिलाओं को डायन का अवतार मानकर भोले-भाले ग्रामीणों व आदिवासियों को उनका वध करने का फरमान जारी करते हैं। फरमान न मानने पर पूरे गाँव अथवा कबीले को प्रलय में फँसने का दुष्प्रचार किया जाता है और आखिर में बेकसूर औरतों को डायन मानकर खौफनाक ढंग से उनका कत्ल कर दिया जाता है।

महिला को डायन घोषित कर उनकी हत्या करने के गत तीन वर्षों के आँकड़े :

वर्ष	दर्ज किये गये मामले
2011	240
2012	119
2013	160

* उपर्युक्त आँकड़े राष्ट्रीय अपराध ब्यूरो के अनुसार हैं।

महिला को डायन घोषित करके उनकी हत्या करनेवाले शीर्ष राज्य व उनके आँकड़े :

राज्यों के नाम	दर्ज किये गये मामले
झारखण्ड	117
उड़ीसा	97
कर्नाटक	77
आन्ध्र प्रदेश	24

* उपर्युक्त आँकड़े वर्ष 2011 से मार्च 2014 तक के हैं।

देश में बड़ी तादात में काम कर रहे सामाजिक संगठनों, गैर सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.), सामाजिक व राजनीतिक कार्यकर्ताओं को आदिवासी व पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर रूढ़ियों, भ्रान्तियों और अन्धविश्वास के प्रति लोगों को जागरूक करना चाहिए। उन्हें ढोंगी बाबाओं व तांत्रिकों से आमजन को सावधन करते हुए महिला सुरक्षा व सम्मान के प्रति व्यापक स्तर पर रैली, दीवार लेखन, नुक्कड़ नाटक व सांस्कृतिक कार्यक्रम जैसे जमीनी आंदोलन छेड़ने चाहिए। जिस देश में नारी का सम्मान नहीं किया जाता है, वह राष्ट्र प्रगति और समृद्धि से सदैव वंचित रहता है। ❑

गरीबी का बढ़ता दायरा

❑ **किशनगिरि गोस्वामी**

कल नुमाईश में 'वो' मिला, चीथड़े पहने हुए,
मैंने पूछा नाम तो बोला कि 'हिन्दुस्तान' है।

ऑक्सफेम के सर्वेक्षण के अनुसार विश्व के समृद्धतम 62 अरबपतियों के पास विश्व की आधी जनसंख्या के बराबर की सम्पत्ति है। गौरतलब है कि सन् 2010 में विश्व के 358 समृद्धतम व्यक्तियों के पास विश्व के 50 प्रतिशत व्यक्तियों जितनी सम्पत्ति थी। सन् 2014 में यह संख्या घट कर 80 और सन् 2015 में महज 62 रह गयी है। हम पुरातन काल में प्रचलित ''राजशाही'' को इसलिए धिक्कारते हैं कि उस दौरान भयानक असमानता व्याप्त थी। लेकिन आधुनिक ''लोकतंत्र'' तो उस कुलक प्रणाली से हजारों प्रकाश वर्ष आगे बढ़कर सारी दुनिया की आधी सम्पत्ति मात्र पाँच दर्शन (62) लोगों के हाथ सौंप रहा है।

सन् 2010 से 2015 तक विश्व के समृद्धतम 62 व्यक्तियों की सम्पत्ति 500 अरब डालर से बढ़कर 1.76 खरब डालर (तकरीबन तीन गुणा) हो गयी है। इसके विपरीत निर्धनतम लोगों की सम्पत्ति में 41 प्रतिशत की कमी आयी है। सर्वेक्षण के अनुसार यदि पूँजी का जमावड़ा इसी तरह सिकुड़ता रहा, तो आगामी 25 वर्षों में महज पाँच (05) समृद्धतम लोगों के पास सारी दुनिया की आधी सम्पत्ति होगी।

विश्व में अनेक देशों के राजनीतिज्ञों, धार्मिक नेताओं, समाज सुधारकों, अर्थशास्त्रियों एवं पत्रकारों का ध्यान इस 'स्तंम्भित कर देनेवाली असमानता' की ओर गया है। अमरीकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने इस असमानता को ''हमारे समय को परिभाषित करनेवाली चुनौती'' कहा है। पोप फ्रांसिस का कहना है कि ''असमानता सामाजिक बुराई की जड़ है।'' उन्होंने उन्मुक्त बाजार और धन कर (ट्रिकल डाउन) नीचे आनेवाले सिद्धान्तों की निन्दा की है। अर्थशास्त्री रॉबर्ट शिलर ने सन् 2013 में नोबल पुरस्कार लेते समय चेतावनी दी थी कि ''आज की सबसे बड़ी समस्या विश्व में बढ़ती असमानता है। यह असमानता न सिर्फ अन्यायपूर्ण है, बल्कि यह लोकतंत्र एवं सामाजिक स्थायित्व के लिए एक गंभीर खतरा है।

प्रमुख अमेरिकी पत्रकार मार्टिन वोल्फ ने हाल ही में ''फाइनेंशियल टाइम्स'' में ''आर्थिक नुकसान उठानेवालों का श्रेष्ठी वर्ग के प्रति विद्रोह'' नामक आलेख में बताया है कि जिन लोगों को वैश्वीकरण से लाभ नहीं पहुँचा, वे स्वयं को बहिष्कृत पाते हैं और श्रेष्ठी वर्ग से बेहद नाराज हैं। वोल्फ ने इस आलोक में चेतावनी दी है कि ओबामा की आर्थिक सलाहकार परिषद पीठ के एक सदस्य एलन क्रुइगर ने परिषद की रिपोर्ट के निष्कर्ष में कहा था कि ''असमानता का एक विकृत प्रभाव यह है कि इसकी वजह से आमदनी अमीरों की ओर हस्तांतरित हो जाती है।

अनेक अर्थशास्त्रियों एवं संस्थानों को यह विश्वास है कि आर्थिक विकास में कमी या मंदी का कारण व्यापक माँग में कमी आना है। इसका एक कारण बढ़ती असमानता भी है। माँग में वृद्धि के लिए आवश्यक है कि समानता को प्रोत्साहित किया जाए। जब आमदनी का प्रवाह गरीबों की ओर होगा, तो माँग में वृद्धि होगी, क्योंकि अमीर की वनिस्पत गरीब अपनी आय का ज्यादा हिस्सा खर्च करता है। *...शेष पृष्ठ 19 पर*

गांधीजी की अर्थनीति

महात्मा गांधी की अर्थव्यवस्था व अर्थशास्त्र के बारे में बहुत मौलिक सोच थी। यह सोच उस समय के प्रचलित विचारों की परवाह न कर सीधे-सीधे ऐसी नीतियों की माँग करती थी, जिससे गरीबों को राहत मिले। साथ ही उन्होंने ऐसे सिद्धान्त अपनाने को कहा, जिससे दुनिया में तनाव व हिंसा दूर हो तथा पर्यावरण को नुकसान न पहुँचे। गांधीजी के लिए विश्व शान्ति, संतोष व पर्यावरण की रक्षा सबसे महत्त्वपूर्ण थे। वह इसी के अनुकूल आर्थिक नीतियों की बात करते थे। उन्होंने अर्थनीति और नैतिकता में कभी भेद नहीं किया। गांधी ने स्पष्ट लिखा—''मुझे स्वीकार करना चाहिए कि मैं अर्थविद्या और नीतिविद्या में कोई भेद नहीं करता। जिस अर्थविद्या से व्यक्ति या राष्ट्र के नैतिक कल्याण को हानि पहुँचती हो उसे मैं अनीतिमय और पापपूर्ण कहूँगा। उदाहरण के लिए जो नीति एक देश को दूसरे देश का शोषण करने की अनुमति देती है वह अनैतिक है। जो मजदूरों को योग्य मेहनताना नहीं देते और उनके परिश्रम का शोषण करते हैं उनसे वस्तुएँ खरीदना या उन वस्तुओं का उपयोग करना पाप है।'' उन्होंने शोषण-विहीन व्यवस्थाव की माँग रखी ताकि सबकी बुनियादी जरूरतें पूरी हों। उन्होंने कहा कि गरीब लोगों को भी उत्पादन के साधनों पर नियंत्रण मिले ताकि उनका शोषण न हो। गांधी ने लिखा कि मेरी राय में न केवल भारत की, बल्कि सारी दुनिया की अर्थरचना ऐसी होनी चाहिए कि किसी को भी अन्न और वस्त्र के अभाव में तकलीफ न सहनी पड़े। दूसरे शब्दों में हर एक को इतना काम अवश्य मिल जाना चाहिए कि वह अपने खाने-पहनने की जरूरतें पूरी कर सके। यह आदर्श तभी कार्यान्वित किया जा सकता है जब जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं के उत्पादन के साधन जनता के नियंत्रण में रहे। वह हर एक को बिना किसी बाधा के उसी तरह उपलब्ध होने चाहिए, जिस तरह कि भगवान की दी हुई हवा और पानी उपलब्ध है। किसी भी हालत में वे दूसरों के शोषण के लिए चलाये जाने वाले व्यापार का वाहन न बनें। किसी भी देश या समुदाय का उन पर एकाधिकार अन्यायपूर्ण होगा।

हम आज न केवल अपने इस दुखी देश में, बल्कि दुनिया के दूसरे हिस्सों में भी जो गरीबी देखते हैं उसका कारण इस सरल सिद्धान्त की उपेक्षा है। प्रायः यही माना जाता है कि निरंतर आर्थिक विकास व वृद्धि से ही दुनिया से गरीबी व अभाव दूर होगी, लेकिन महात्मा गांधी ने यह पहचान लिया था कि इस तरह के आर्थिक विकास के तहत गरीबी व विषमता बढ़ने की सम्भावना भी मौजूद रहती है। अतः उन्होंने आर्थिक विकास को नहीं, बल्कि गरीब आदमी की बुनियादी आवश्यकताओं को अपनी आर्थिक सोच का केन्द्र बनाया। उन्होंने देश के नेताओं और नियोजकों से विशेष आग्रह किया कि जब भी तुम्हें संदेह हो या तुम्हारा अहम तुम पर हॉवी होने लगे तो यह कसौटी आजमाओ। जो सबसे गरीब और कमजोर आदमी तुमने देखा है, उसकी शक्ल याद करो और अपने दिल से पूछो कि जो कदम उठाने का तुम विचार कर रहे हो, वह उस आदमी के लिए कितना उपयोगी होगा। क्या उससे उसे कुछ लाभ पहुँचेगा? क्या उससे वह अपने ही जीवन और भाग्य पर कुछ काबू रख सकेगा? यानी क्या उससे उन करोड़ों लोगों को स्वराज मिल सकेगा जिनके पेट भूखे हैं और आत्मा अतृप्त?

इस तरह महात्मा गांधी गरीब आदमी को आर्थिक चिन्तन के केन्द्र में ले आये। तेजी से होनेवाला तकनीकी बदलाव और मशीनीकरण उस समय की विचारधारा को भी चुनौती दी और देश के गरीब किसान, दस्तकार और मजदूर के रोजगार और आजीविका को अंधाधुंध मशीनीकरण से बचाने के लिए उन्होंने जोर दिया। यंत्रों के बारे में उन्होंने कहा कि उससे मनुष्य को सहारा मिलना चाहिए। वर्तमान में यह झुकाव है कि कुछ लोगों के हाथ में खूब सम्पत्ति पहुँचायी जाये और जिन करोड़ों स्त्री-पुरुषों के मुँह से रोटी छीनी है उन बेचारों की जरा भी परवाह न की जाये।

सच्ची योजना तो यह होगी कि भारत की सम्पूर्ण मानव शक्ति का अधिक से अधिक उपयोग किया जाये। मानव श्रम की परवाह न करने वाली कोई भी योजना न तो मुल्क में सन्तुलन कायम रख सकती है और न इनसानों को बराबरी का दर्जा दे सकती है। इसी तरह गांधीजी ने कहा, मनुष्य का लक्ष्य अपने उपभोग को निरंतर बढ़ाना नहीं अपितु सादगी के जीवन में संतोष प्राप्त करना है। यदि शक्तिशाली व अमीर लोग इस भावना में जीयें तो गरीबों के लिए संसाधन बचने की सम्भावना कहीं अधिक होगी। उनके शब्दों में, सच्ची सभ्यता का लक्षण संग्रह बढ़ाना नहीं है, बल्कि सोच-समझकर और अपनी इच्छा से उसे कम करना है। ज्यों-ज्यों हम संग्रह घटाते जाते हैं त्यों-त्यों सच्चा सुख और संतोष बढ़ता जाता है, सेवा की शक्ति बढ़ती जाती है। त्याग की यह शक्ति हममें अचानक नहीं आयेगी। पहले हमें ऐसी मनोवृत्ति पैदा करनी होगी कि हमें उन सुख-सुविधाओं का उपयोग नहीं करना है, जिनसे लाखों लोग वंचित हैं। समता और सादगी को एक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य के रूप में प्रतिष्ठित कर पर्यावरण का नाम लिये बिना ही महात्मा गांधी हमें पर्यावरण संरक्षण के मूल से परिचित करा गये। उन्होंने कहा भी कि प्रकृति सब मनुष्यों की जरूरतें तो पूरी कर सकती है, लेकिन लालच नहीं। ❑

(साभार : महात्मा गांधी के विचार, सं. आरके प्रभु/यूआर राव)

हल्दी के औषधीय गुण

❑ प्रो. (डॉ.) योगेन्द्र यादव

हर परिवार के भोजन में मसाले के रूप में प्रयोग होनेवाली हल्दी एक नियाहत जरूरी खाद्य वस्तु है। इसका प्रयोग सामान्य लोग औषधी के रूप में भी करते हुए देखे जा सकते हैं। इसका रंग सुनहरा पीला होता है। सब्जी के अलावा इसका उपयोग दाल विशेषकर अरहर के दाल में जरूर किया जाता है। अब मैं इसके औषधीय गुणों का वर्णन करूँगा। आँख की बीमारियों में उपयोगी हल्दी आँख की बीमारियों के लिए एक उपयोगी औषधी है। यदि किसी की आँख में लाली हो, तो उसे साफ सूती कपड़े को गीला करके और उसमें हल्दी लगा कर उसे आँख में लगाना चाहिए। इससे आँख की लाली ठीक हो जाती है। जिन लोगों की आँखें सोते समय दुखती हों, लाल रहती हों, आँखों में घाव या कार्निया हो गया हो, नजर कमजोर हो गयी हो, ऐसे लोगों को पत्थर पर हल्दी को घिस कर रात में सोते समय हल्दी आँखों में काजल की तरह लगाना चाहिए। आज कल आँखों की रोशनी बहुत जल्दी क्षीण हो रही है। रोशनी को बनाये रखने या उसे पुनः वापस लाने के लिए हल्दी और नीम की नई कोपलें बराबर मात्रा में 7 दिन तक खरल में घोटें। घोटते समय उसमें पीपल का दूध भी मिला लिया करें। इस दवा को काजल की तरह आँखों में लगाने से आँखों की रोशनी पुनः वापस आने लगती है।

आँतों की सूजन में उपयोगी—यदि किसी रोग या चोट के कारण आँतों में सूजन आ गयी हो, तो हल्दी बहुत ही उपयोगी होती है। इसके लिए हल्दी, दारु हल्दी, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, हरड़, साठी की जड़ लौंग और रसौत समान मात्रा में लेकर उसका चूर्ण बना लें और रात को सोते समय उसका लेप पेट पर लगायें, उससे आँतों की सूजन ठीक हो जाती है।

कान के रोग में उपयोगी—कान के रोगों के लिए हल्दी एक रामबाण औषधी है। यदि किसी के कान में दर्द हो रहा हो तो ऐसे रोगी को एक गिलास पानी में दो छोटे चम्मच हल्दी डालकर उबाल लेना चाहिए। फिर गिलास के ऊपर सूती कपड़ा बाँधकर उसकी भाप देना चाहिए। इससे कान दर्द तुरंत बंद हो जाता है। यदि कान बह रहा हो, तो हल्दी को तेल में भून कर गुनगुना होने पर दो-दो बूँदें कान में डालने पर कुछ ही दिनों में कान का बहना बंद हो जाता है।

कुष्ठ रोग में उपयोगी—हल्दी कुष्ठ रोग में अत्यंत उपयोगी है। जिन व्यक्तियों को कुष्ठ रोग हो गया हो, उन्हें एक बोतल स्प्रिट में 125 ग्राम हल्दी का चूर्ण डालकर बोतल को ढक्कन लगा कर 3-4 घंटे धूप में रखने से जो टिंचर तैयार होता है, सुबह-शाम इसे कोढ़ पर लगाने पर कुछ ही दिनों में लाभ होने लगता है। यदि शरीर में कहीं सफेद दाग हो तो केले के पत्ते की राख और उसके ही बराबर हल्दी लेकर दोनों को पानी में पीस कर उसका लेप लगाने से सफेद दाग मिट जाते हैं। इसके आलावा हल्दी चूर्ण 3 ग्राम गाय के मूत्र में मिलाकर पीने से सफेद दाग मिट जाते हैं।

खाँसी में उपयोगी—जिन व्यक्तियों को खाँसी आ रही हो, उनके लिए हल्दी रामबाण औषधी है। एक कटोरी में एक चम्मच हल्दी और थोड़ा-सा नमक मिलाकर गर्म तवे पर छौंक दें, उबाली आने पर कटोरी में वापस निकाल लें। इसे गर्म-गर्म दो-दो चम्मच पिलाने से बच्चों एवं बड़ों की खाँसी में बहुत लाभ होता है। यदि बलगम आ रहा हो, तो इसमें थोड़ा-सा खाने का सोडा मिला दें, यह बलगम को ढीला करके बाहर निकाल देगी। इसके अलावा सोते समय हल्दी चूर्ण को गर्म दूध के साथ लेने से खाँसी में आराम मिलता है। यदि पुरानी खाँसी हो, तो भुनी हुई हल्दी का चूर्ण एक ग्राम, पान व अदरक का रस तीन-तीन ग्राम, शहद छः ग्राम मिलाकर दिन में तीन बार लें, इससे पुरानी खाँसी ठीक हो जाती है।

गले के रोग में उपयोगी—गले के रोगियों के लिए भी हल्दी बहुत ही उपयोगी है। यदि किसी की आवाज भर्राई हुई निकल रही हो, तो उसे ठीक करने के लिए थोड़ी-सी पिसी हल्दी में थोड़ा-सा गुड़ मिलाकर सेवन करने से गला साफ रहता है। एक चम्मच पिसी हुई हल्दी को गर्म दूध या गर्म पानी में घोलकर पीने से गले की खराश व उससे होनेवाली तकलीफ, आवाज बैठना, सर्दी, जुकाम, खाँसी ठीक हो जाती है।

गठिया रोग में उपयोगी—इस समय यह एक आम बीमारी हो गयी है। जिन रोगियों को गठिया की बीमारी हो, वे एक किलो हल्दी गर्म राख में भून लें, फिर उसे साफ करके पीस लें, इसमें एक किलो सूखे नारियल को कद्दूकस करके मिला लें, इच्छानुसार ढाई सौ ग्राम काजू या मूँगफली के दाने व एक किलो पुराना गुड़ मिलाकर लड्डू बना लें। सुबह-शाम एक-एक लड्डू खाएँ, गठिया की बीमारी दूर हो जायेगी।

गठिया के रोगियों को हल्दी का लड्डू खाने से भी लाभ होता है।

घाव में उपयोगी—यदि किसी जानवर या व्यक्ति को कोई घाव हो गया हो, तो उसमें हल्दी छिड़कना चाहिए, इससे उसका घाव जल्दी भर जाता है। यदि उसमें कीड़े भी पड़ गये होंगे, तो हल्दी छिड़कने से वे भी मर जायेंगे। इसके अलावा हल्दी को तवे पर अच्छी तरह भूनकर उसका लेप लगाने से जख्म जल्दी भर जाता है।

चोट में उपयोगी—हल्दी चोट में बहुत ही उपयोगी होता है। यदि कोई पुराना दर्द हो, तो अनार के छिलके को जलाकर उसमें हल्दी मिलाकर चोट पर बाँधने से पुरानी से पुरानी चोट के दर्द में भी आराम मिलता है। चोट लगने या कट-फट जाने पर खून बह रहा हो तो वहाँ हल्दी भर दें। तुरंत खून बहना बंद हो जायेगा। अन्दरूनी चोट हो तो एक गिलास गर्म दूध में हल्दी मिलाकर पिला दें। अंदरूनी चोट भी ठीक हो जायेगी। यदि खून नहीं निकला हो और सूजन आ गयी हो तो एक प्याज को पीसकर उसमें एक चम्मच हल्दी मिला लें और उसे तिल के तेल में गर्म कर लें, फिर इसका सेंक दें। इससे सूजन ठीक हो जायेगी।

जुकाम में उपयोगी—जुकाम में भी हल्दी बहुत ही कारगर है। जिन्हें तेज जुकाम हो, उन्हें एक कप गर्म दूध में आधा चम्मच हल्दी और आधा चम्मच काली मिर्च मिलाकर तीन दिन, दिन में तीन बार पीने से जुकाम ठीक हो जाता है। सोते समय एक गिलास गर्म दूध में एक चम्मच हल्दी मिलाकर पीने से जुकाम एवं सर्दी दोनों में आराम मिलता है। हल्दी को पानी में पीसकर ललाट पर लेप करने से भी जुकाम ठीक हो जाता है।

बुखार में उपयोगी—जिन व्यक्तियों को बुखार हो, उन्हें एक चम्मच हल्दी चूर्ण, तीन छुहारे, लहसुन की दो गाँठ, आधा किलो दूध में मिला कर खूब उबाल लें। फिर गर्म-गर्म दूध पीकर ओढ़कर सो जाएँ, यह ध्यान रहे कि शरीर में कहीं भी हवा न लगे, इससे तुरंत बुखार उतर जाता है। न्युमोनिया की यह राम बाण दवा है। यदि बच्चों को बुखार हो तो इसकी आधी मात्रा दें। और उन्हें भी चादर में लपेट कर सुला दें। जब खूब पसीना आ जाए, तो उसे एक तौलिये से पोछ दें, बुखार ठीक हो जायेगा।

इसके अलावा अन्य छोटी-मोटी बीमारियों में भी हल्दी बहुत ही उपयोगी है। भोजन में इसकी नियत मात्रा होने के कारण यह हर दिन हमारा उपचार करती रहती है। ❑

कुरुक्षेत्र रचने आया हूँ

❑ लक्ष्मी निधि

पता नहीं, हर सावन में क्यों, मेरा मन बौरा जाता है,
पगला बादल सा बन कर वह, नील गगन में छा जाता है।

रिमझिम-रिमझिम कहीं बरसता, कहीं बरसता मुसलाधार,
पता नहीं हर सावन में क्यों, आ जाता है, मुझमें ज्वार।

बन कर गोकुल, सारी दुनिया, अन्तरतम में छा जाती है,
माटी की हर पुतली जैसे, राधा बन कर आ जाती है।

कदम-कदम गोकुल लगता है, हर बोली वंशी लगती है,
सावन की रिमझिम बूँदों में, राधा ही राधा लगती है।

लेकिन, बन कर कृष्ण कन्हैया, रास नहीं मुझको भाता है,
कुरुक्षेत्र रचने की खातिर, मेरा मन बौरा जाता है।

मेरी राधा बनी भिखारिन, और रचाऊ रास यहाँ मैं?
ग्वाल-बाल भूखे मरते हैं, और रचाऊँ फाग यहाँ मैं?

कितनी बदल गयी है दुनिया, दुनिया में क्या-क्या होता है,
आग लगी घर-घर में लेकिन, सारा जग सोता रहता है।

देख रवैया इस दुनिया की, मेरे मन अंगार भरे हैं।
नयी क्रांति के लिए हृदय में, नव युग के हुंकार भरे हैं।

नव युग का मैं कृष्ण कन्हैया, इन्कलाब करने आया हूँ,
शोषित जन के लिए यहाँ मैं, कुरुक्षेत्र रचने आया हूँ।

जैसी करनी वैसी भरनी

❑ विनोबा

एक योगी और एक वेश्या आमने-सामने रहते थे। योगी के घर में योगी का ढंग चलता था, और वेश्या के घर में उसका ढंग चलता था। दोनों की मृत्यु एक ही दिन हुई। उन्हें ले जाने के लिए ऊपर से दूत आये।

विष्णुदूत वेश्या को लेकर स्वर्ग की ओर चले।

यमदूत योगी को लेकर नरक की ओर चले। योगी सोचने लगा : ''यह कैसा अन्याय है। यह तो वैसा ही है, जैसे पोस्ट ऑफिस से कई दफा एक का पत्र दूसरे के पास चला जाता है। यमदूतों को वेश्या के घर जाना चाहिए था, सो वे मेरे घर आये और विष्णुदूतों को मेरे घर आना चाहिए था, सो वे उधर गये! यह तो अन्धेर है।'' तब दूतों ने उससे कहा : ''हमारे यहाँ अन्धेर नहीं, प्रकाश ही है। यहाँ कुछ भी गड़बड़ नहीं होती, हरएक का ठीक-ठीक रेकार्ड रखा जाता है। तुम जरा नीचे देखो।''

विमान में बैठे योगिराज ने नीचे देखा, धरती पर उसके शरीर को सजाया गया था और उसका जुलूस निकाला गया था। रामधुन गाते हुए सब लोग उस शरीर को श्मशान की ओर ले जा रहे थे। वहाँ पर उसके लिए चंदन की चिता तैयार थी। दूतों ने उससे कहा : ''देखो, तुम्हारे लायक फल तुम्हें मिला।'' उसने दूसरी तरफ देखा, तो उधर वेश्या की लाश को किसी ने उठाया तक नहीं था, इसलिए गीध और कुत्ते उसे फाड़-फाड़कर खा रहे थे।

दूतों ने कहा : ''वेश्या के शरीर ने बुरा काम किया, इसलिए उसे उसका फल मिला। तुम्हारे शरीर ने अच्छा काम किया, इसलिए तुम्हें अच्छा फल मिला। परन्तु मन की बात देखो। तुम शरीर से भक्ति करते थे, लेकिन तुम्हारे मन में क्या था? तुम यही सोचते रहते थे कि उधर वेश्या के घर में कैसा सुन्दर संगीत और नृत्य चल रहा है, वहाँ बड़ा मजा होता है। मेरा जीवन तो नीरस है। उधर वेश्या यद्यपि शरीर से बुरा कर्म करती थी, फिर भी मन में हमेशा यही सोचती रहती थी कि सामने योगी के यहाँ कितना अच्छा भजन चल रहा है। मैं कितनी पापी हूँ, जो भजन नहीं करती। मैं इस जीवन से ऊब गयी हूँ। परन्तु मुक्त नहीं हो पाती हूँ!''

''भगवान् तो मन को जानते हैं और उसके अनुसार फल देते हैं। दोनों को उनके अनुरूप फल मिल रहे हैं न?''

योगिराज यह बात सुनते ही चुप हो रहे! ('उगते तारे, खिलते फूल' से)

... पृष्ठ 15 का शेष

एक तरफ तो सारी दुनिया के लोग जहाँ असमानता कम करने की बात कर रहे हैं, वहीं भारत सरकार असमानता बढ़ाने की ओर अग्रसर है। इस साल के केन्द्रीय बजट में वास्तव में तो कॉरपोरेट आयकर, एक्साइज एवं कस्टम शुल्क में पाँच लाख दस हजार करोड़ रुपये की छूट दी गयी है। लेकिन आपको यह कहने की आज्ञा नहीं है कि आप इस ''राजस्व'' को छूट पुकारें। क्योंकि ऐसा कहते ही आपको राष्ट्रविरोधी करार कर दिया जाएगा। अब इस छूट को हमेशा के लिए बजट से विदा कर दिया गया है। इसके बदले में हमारे पास है : ''केन्द्रीय कर प्रणाली के अन्तर्गत 'कर प्रोत्साहन' का राजस्व प्रभाव विवरण।

ऐसा जनतंत्र जिसमें, जिन्दा रहने के लिए
घोड़े और घास को, एक जैसी छूट है
कैसी विडम्बना? कैसी छूट है?

मसलन कॉरपोरेट को आयकर में सीधी छूट का राजस्व प्रभाव, जो गत वर्ष से 3644 करोड़ रु. ज्यादा है। यह मनरेगा में घोषित ''जबरदस्त वृद्धि'' (3810 करोड़) के लगभग बराबर ही है। गौरतलब है कि मनरेगा पर करोड़ों लोगों का जीवन निर्भर है, जबकि दूसरी ओर कॉरपोरेट बहुत ही कम है। यदि सन् 2005-06 से अब तक कॉरपोरेट्स को मिली छूट की गणना करें, तो हम इस राशि से अगले 100 से भी अधिक वर्षों तक मनरेगा को उसके वर्तमान स्तर तक संचालित कर सकते हैं। हम करोड़ों लोगों की जिन्दगियों का बेहतर रूपांतरण कर सकते हैं। ''छूट'' शब्द को त्याग कर उसे ''कर प्रोत्साहन'' की आड़ में छुपाना, पीड़ितों एवं वंचितों का अपमान है। इसके माध्यम से पलायनवादी मूढ़ता को अंगीकार कर लिया गया है। यहाँ पर यह विचारणीय है कि जब लाखों लोग भयानक यंत्रणा झेल रहे हैं, तो ऐसे जरूरतमंद सार्वजनिक धन की यह ''लूट'' किसके हिस्से आ रही है?

दरअसल अपने यहाँ जनतंत्र,
एक ऐसा तमाशा है।
जिसकी जान, मदारी की भाषा है।

विश्व में मूलभूत समस्या है—गरीबी की। उसे मिटाने की बात तो कम होती है, चाँद-सूरज पर पहुँचने की योजनाएँ ज्यादा प्रमुखता से बनती हैं। परिवार के लोग तो भूख से मर रहे हैं और चाँद-तारों पर पहुँचने की योजनाएँ बन रही हैं। बड़ी हास्यास्पद स्थिति है। हम क्यों अपनी बुद्धि का उपयोग गरीबी मिटाने में नहीं करते। किसी भी सुव्यवस्थित समाज में रोजी कमाना, सबसे सुगम बात होनी चाहिए और हुआ करती है। निःसन्देह किसी देश की सुव्यवस्था की पहचान यह नहीं है कि उसमें कितने लखपति/करोड़पति लोग रहते हैं। बल्कि यह है कि जन साधारण का कोई व्यक्ति भूखों तो नहीं मर रहा है क्योंकि अतिशय निर्धनता नैतिक पतन के अतिरिक्त और कुछ नहीं दे सकती। मुल्क ने की है तरक्की तो बहुत मगर, पेट भरते हैं यहाँ मासूम कचरा बीन कर! ❑

हर मौसम से प्यार करें

❑ लक्ष्मीदास

हमें हर मौसम का आनन्द लेना चाहिए। यही प्राकृतिक आनन्द है। आजकल गर्मी का मौसम है, हमें गर्मी का आनन्द लेना चाहिए। सर्दी होगी, तो सर्दी का आनन्द लेंगे। भारत में छः ऋतुएँ हैं और भारत में जन्मे व्यक्ति के शरीर की बनावट, कुदरत ने इस ढंग से बनाई है कि हम सभी ऋतुओं का आनन्द ले सकते हैं। हमारी यह प्रवृत्ति है कि यदि गर्मी न हो तो हम परेशान हो जाते हैं और थोड़ी गर्मी तेज हो जाए तो भी हम परेशान हो जाते हैं। हर व्यक्ति एक-दूसरे से शिकायत करता है, ''अरे भाई गर्मी बहुत है।'' मैं यह नहीं समझ पाता कि गर्मी में यदि गर्मी नहीं होगी तो फिर गर्मी कब होगी? गर्मी का मौसम है तो गर्मी होगी ही इसलिए गर्मी के मौसम में गर्मी ज्यादा है यह शिकायत बेमानी है या फिर यदि गर्मी के मौसम में गर्मी तंग कर रही है तो फिर यह हमारे निर्माण की परिस्थिति है। अर्थात् हमने अपने शरीर को इस तरह से बना लिया है कि न तो गर्मी सहन होती है, न सर्दी सहन होती है और न वर्षा ही सहन होती है। हर मौसम में हमारी शिकायत बनी रहती है जबकि हर मौसम में, उस मौसम का आनन्द लेना चाहिए। उस मौसम के जो स्वास्थ्यवर्धक गुण हैं, उनका उपयोग करते हुए अपने शरीर के स्वास्थ्य को इस तरह से मजबूत करना चाहिए ताकि गर्मी जितनी अधिक हो, उसका आनन्द उतना ही मजेदार हो।

गर्मी में हम तरबूज खाते हैं। खरबूजा खाते हैं और फिर यदि दस्त शुरू हो जाते हैं तो तजबूज और खरबूजे को दोष देते हैं। कहते हैं तरबूज खा लिया इसलिए दस्त लग गये। जबकि तरबूज या खरबूजे का स्वाभाविक गुण है और शरीर की सहज प्रक्रिया है कि पानी अधिक हुआ तो शरीर उसका उपयोग शरीर की गन्दगी को बाहर फेंकने के लिए करता है। तरबूज और खरबूजा हमारा मित्र है। शरीर जिसकी सहज क्रिया गन्दगी को बाहर फेंकने की है और जो शरीर गन्दगी को बाहर फेंककर शरीर के आवश्यक अंगों को साफ कर रहा है उसे दोष देते हुए तरबूज और खरबूजा खाना बन्द कर देते हैं और गन्दगी बाहर न निकले इसके लिए दवाओं का सहारा लेते हैं। शरीर का ध्यान रखना चाहिए। उसे मोनीटर करना चाहिए। यदि दस्त लगे तो उसके कारण ढूँढ़ने चाहिए। सावधानी बरतनी चाहिए। कहीं कोई उपद्रव न हो जाए इसका ख्याल रखना चाहिए लेकिन यदि शरीर सहज रूप से गन्दगी बाहर फेंक रहा है और शरीर को अन्दर से साफ कर रहा है तो इस स्वाभाविक प्रक्रिया को रोकना नहीं चाहिए। न मौसम पर नाराजगी करनी चाहिए और न तरबूज, खरबूजा आदि को दोष देना चाहिए। शरीर स्वयं को स्वस्थ रखने का हमेशा प्रयास करता है। इस स्वाभाविक प्रक्रिया को रोकना नहीं चाहिए, दबाना नहीं चाहिए। पानी, शरीर की स्वाभाविक आवश्यकता है। परन्तु हम कई बार आवश्यकतानुसार पानी का उपयोग नहीं कर पाते लेकिन गर्मियों में पानी की माँग बढ़ जाती है तो पानी का भी इस्तेमाल करते हैं और पानी की बहुतायत वालीं, सब्जियों आदि का भी इस्तेमाल करते हैं। इस कारण शरीर की सफाई करने की स्वाभाविक क्रिया बढ़ जाती है और हमें लगता है कि हमें दस्त लग गए। गर्मी में गर्मी का जो आनन्द ले सकता है, वही हर मौसम का आनन्द ले सकता है। यदि शरीर को हम गर्मी के लिए तैयार कर पाते हैं तो शरीर स्वस्थ बनता है और गर्मी का गर्मी में आनन्द ले सकते हैं। इसी तरह हम सर्दी में सर्दी का आनन्द भी ले सकते हैं। यह स्वाभाविक क्रिया है। प्राकृतिक क्रिया है लेकिन हम लोग वातानुकूल वातावरण में रहकर अस्थायी शरीर सुख का आनन्द तो लेते हैं लेकिन शरीर की मजबूती को धीरे-धीरे खोते जाते हैं। हमें यह समझ लेना चाहिए कि मौसम का कोई दोष नहीं होता। क्योंकि बीमारी के लिए मौसम जिम्मेदार है तो उस मौसम में सभी को बीमार हो जाना चाहिए। परन्तु ऐसा नहीं होता। अमुक मौसम में कोई-कोई बीमार होता है शेष सब लोग स्वस्थ रह जाते हैं। इसलिए हमें हर मौसम का आनन्द लेने के अनुरूप शरीर को ढालना चाहिए और हर मौसम का आनन्द लेना चाहिए।

❑

सर्व सेवा संघ (स्वत्वाधिकारी) के लिए महामंत्री, शेख हुसैन द्वारा सर्व सेवा संघ परिसर, राजघाट, वाराणसी (उ.प्र.) 221001 से प्रकाशित तथा प्रिन्टेक, इंडियन प्रेस कॉलोनी, मलदहिया, वाराणसी से मुद्रित। संपादक : बिमल कुमार। छपी प्रतियाँ : 1400